समाज सुधारक स्वामी श्रद्धानन्द

समाज सुधारक

स्वामी श्रद्धानन्द

उमा चतुर्वेदी

D P B New Delhi

प्रकाशक अनिल प्रकाशन
2619 20, न्यू मार्केट,
नई सड़क, दिल्ली 6

मुद्रक गौतम प्रिंटर्स, दिल्ली 110032

संस्करण 1989

मूल्य 40 00

विषय-सूची

1 बचपन

समाजसुधारक क्रांतिकारी विचारो के निष्ठावान समाज सुधारक श्रद्धानद का जन्म सम्वत 1913 विक्रमी (सन् 1856) को फाल्गुन मास मे कृष्ण पक्ष की त्रयोदशी को पजाब प्रात के जालधर जिले के पास बहने वाली सतलज नदी के किनारे बसे प्राकृतिक सम्पदा से सुसज्जित तलवन नगरी म हुआ था।

जन्म के ग्रह लग्ना के अनुसार इनका नाम मुशीराम रखा गया था। ज म लग्न पत्रिका के अनुसार इनका नाम बुद्धि विवेक के देवता 'बृहस्पति' पड़ा ! सचमुच मुशीराम ज्ञान सागर के गुरु साबित हुए।

श्री मुशीराम का जन्म एक सम्पन्न खत्री परिवार मे हुआ था। इनके दादा का नाम श्री गुलाब राय था। जो उस समय के राजा नौनिहाल सिह की रानी श्रीमती हीरादेवी के मुख्य मुख्तार व मुशी थे। इस कारणवश मुशीराम का परिवार एक राजसम्मान से ओतप्रोत प्रतिष्ठित परिवार था। मुशीराम के पिता का नाम लाला नानक चद था जो शहर कोतवाल के प्रतिष्ठित पद पर नियुक्त हुए थे।

मुशीराम के प्रपितामह का नाम सुखानद था। इनका ननिहाल तलवन मे था। नाना नानी को सुखानद से हार्दिक स्नेह था। इसलिए उन्होने सुखानद को तलवन में ही अपने पास रख लिया।

सुखानद के तीन पुत्र और एक पुत्री थी। जो मुशीराम की मा थी।

सुखानद जी के एक पुत्र का नाम लाला कन्हैलाल था। जो उस समय महाराजा रणजीत सिह के दरबार मे कपूरथला रियासत के वकील थे।

उनके दूसरे पुत्र गुलाब राय थे। जो रानी हीरादेवी के थे। रानी हीरादेवी जब जालन्धर आ गयी तो इन्हीं लाला

के पुत्र का नाम लाला नानक चद था जो मुशीराम के पिता थे।

लाला नानक चद वडे धमपरायण, ईश्वर भक्त और बड ही शिव भक्त थ। साथ ही साथ वे बडे याग्य और कमठ व्यक्ति थे। अपनी योग्यता के आधार पर कपूरथला रियासत मे थानेदार के पद पर नियुक्त हो गये।

लाला नानक चद ने बडी मेहनत और ईमानदारी मे अपन कतव्यो का पालन किया। वह बहुत ही कायकुशल और स्पष्टवादी और सच्चे व्यक्ति थे।

उनकी इन विशेषताओ के कारण रियासत के दीवान दानिशचद से लडाई हो गयी। जिस कारण उन्होने इस नौकरी को लात मार दी।

नौकरी छोडने के बाद लाला नानक चद काफी परेशानिया म फस गये। उन्ह काफी समय तक कोई अच्छी नौकरी नही मिली। इधर पारिवारिक जिम्मदारिया दिन प्रतिदिन बढती जा रही थी। उन्हें अपन परिवार को अच्छी शिक्षा देनी थी। लडकी प्रेम देवी सयानी हा रही थी। उसका विवाह करना था। पर आर्थिक परेशानिया कुछ करन नहीं दे रही थीं।

सन् 1856 का समय, सामाजिक बदलाव का युग था। उस समय अग्रेजी शासन के खिलाफ विद्रोह की आग धीरे धीरे सुलग रही थी। पूरे देश में अग्रेजो के कपटपूण व्यवहार के कारण वातावरण विस्फोटक रूप ले रहा था।

स्थान-स्थान पर छोटी छोटी घटनाए घट रही थीं जो आन वाले समय का सकेत थीं। कानपुर, दिल्ली, मरठ, झासी, बगाल और बिहार में विद्रोह की तैयारियां चल रही थीं। उस समय ही ऐसा लगन लगा था जस भारतवासी, अग्रेजों को हिंदुस्तान से निकाल कर दम लेंगे।

पजाब मे भी अग्रेज विरोधी वातावरण तयार हो गया था। किन्तु अग्रेज सरकार न बडी चतुराई से विरोध की बेल वहा बढन स रोक दी थी। इसके बावजूद उत्तर और पश्चिमी भारत के प्रतिष्ठित नताओं न क्रांति फलान की कोशिशें जारी रखीं। हिसार मे विद्रोह के अकुर फूटन लग। अग्रेजी फौज को उसी समय हिसार पहुचन के आदश दिए गए।

अंग्रेज फौज अपन लाव-लश्कर समेत हिसार की ओर चल दी। उसी समय लाला नानक चद ने भी रोजगार की तलाश मे हिसार की ओर का रुख किया।

अंग्रेज फौज शाम के समय हिसार शहर की सीमा पर पहुच गयी। उसने शहर के बाहर अपना डेरा डाल लिया। अंग्रेजी फौज का कमाडर अपनी फौज हेतु भोजन के लिए बेचैनी से इधर उधर देख रहा था। तभी लाला नानक चद भी अपने घोडे पर सवार होकर उधर स गुजरे, उन्हान अंग्रेजी फौज के कमाण्डर को सलाम किया।

अंग्रज कमाडर भी भोजन की तलाश मे था। उसे लाला नानक चन्द बहुत प्रतिष्ठित और सम्पन्न व्यक्ति लगे। उसने उन्हें तुरन्त अपन पास बुलाया और फौज के लिए भोजन की व्यवस्था का अनुरोध किया।

फौज दिन भर की भूखी-प्यासी थी। अंग्रेज कमाण्डर खुद भी दिन-भर का हारा-थका था। भूख और प्यास दोनो से ही क्लात था। इस स्थिति मे और अंग्रेजो के खिलाफ विद्रोह के कारण किसी से सहायता मागना भी उसे अनुचित लग रहा था। किस पर विश्वास किया जाय और किस पर नही। हिसार मे भी अंग्रेजो को अपन दोस्त और दुश्मन का फर्क करना आसान नही था। नानक चन्द के व्यक्तित्व मे अंग्रजो के प्रति शासक सम्मान भाव था जिस कारण कमाण्डर ने उनसे सहायता माग ली।

लाला नानक चन्द तुरन्त ही भोजन का इन्तजाम करन का वायदा कर हिसार रियासत के अन्दर घुस चले गए। उन्होंने हिसार शहर मे प्रवेश करते ही देखा कि एक चौधरी के यहा भारी मात्रा मे भोजन की व्यवस्था है। चौधरी से पूछने पर नानक चन्द को ज्ञात हुआ कि उस दिन चौधरी के पिता का श्राद्ध था इसलिए ब्राह्मण भोजन की व्यवस्था की गयी थी। लाला नानक चद ने चौधरी को समझाया कि नगर के बाहर अंग्रेज फौज आ धमकी है। इस कारण इतन ब्राह्मण भाजन करने शायद ही आ सकें। इस कारण इनना स्वादिष्ट भोजन व्यर्थ ज... अगर यही भोजन भूखे प्यासे अंग्रेज सैनिको तक पहुचा दिया

खाना व्यय भी नही जायेगा तथा इसके साथ-साथ अग्रेज फौज प्रसन्न हो जायगी, चौधरी को अग्रेज सरकार से भारी इनाम मिलने की सभावना हो सकती है।

चौधरी को लाला नानक चन्द की राय समझ मे आ गयी। सारे पकवान लेकर अग्रेज फौज के डेरो मे जा पहुचे। भूखे अग्रेज अधिकारी इतने भारी मात्रा म पकवान देखकर गदगद हो गय। उसने नानक चद को गले लगा लिया। उनका नाम पता पूछा और साथ-ही साथ अग्रेज कमाडर ने आगे भी अग्रेज फौज की मदद करते रहन का आश्वासन मागा। लाला नानक चन्द ने तुरन्त ही उनकी बात मान ली।

अग्रेजी फौज न हिसार शहर मे फली हुई विद्रोह की आग को बुझा दिया। सेना ने नगर पर कब्जा कर लिया। धीरे धीरे हिसार शहर की हालत सामान्य हो गयी। लाला नानक चन्द न अग्रेजी फौज की इस काम म भी सहायता की। इस कारण प्रसन्न होकर अग्रेज सरकार न उन्हें सरकारी सेवा मे ले लिया और हिसार रियासत का कोतवाल नियुक्त कर दिया।

कुछ समय बाद ही अग्रेजो न उन्हें रियासतदार बनाकर सहारनपुर भेज दिया। उन्ह अभी सहारनपुर आय थोडे ही दिन हुए थे कि अग्रेजो ने नेपाल क पास नेपाल घाट की लडाई मे फौज के साथ भेज दिया। यहा भी लाला नानक चन्द न बडी ईमानदारी और योग्यता के साथ अपन काय को सम्पन्न किया।

इसी दौरान उन्ह पुत्र रत्न के रूप मे मुशीराम की प्राप्ति हुई।

1857 म सारे देश म अग्रेजों के खिलाफ महान क्रांति फल गयी। जगह जगह अग्रेजी हुकूमत के खिलाफ विद्रोह फैलन लगा। दिल्ली, अवध बिहार बगाल, मध्य प्रदेश मे विद्रोह ने अग्रेज सरकार के छक्के छुडा दिए। सारे देश मे अग्रेजो के विरुद्ध विद्रोह का वातावरण स्थापित कर दिया था। करीब सारे देश म ही यह भावना फैली हुई थी पर अंग्रेज सरकार का सूय अभी अस्त होने वाला नहीं था। अग्रेज सरकार न बडी ही बेरहमी स यह विद्रोह दबा लिया।

लाला नानक चन्द न इस काय में भी अग्रेजो का भरपूर साथ

दिया, जिसके इनाम मे उन्हे बरेली शहर मे पुलिस इन्स्पेक्टर बना दिया गया।

लाला नानक चन्द को अपन सम्मानजनक पद के कारण मान-सम्मान मिलता था। जालन्धर और तलवन मे उनके परिवार को भरपूर सम्मान मिलता था। बालक मुशीराम उनके सबसे छोट पुत्र थे। उनके सीताराम, मूलाराम, आत्माराम नामक भाई थे और प्रेम देवी और द्रौपदी नाम की बहनें थी।

मुशीराम अपन परिवार मे सबसे छोट थे। इसलिए घर और बाहर उन्हें सबसे ज्यादा लाड प्यार मिलता। तीन वष के होन पर मुशीराम अपन पिता के पास सपरिवार बरेली चले गय।

बरेली मे पुलिस लाइन मे मुशीराम दिनभर घूमते और खेलते रहते थे। उनके दो बडे भाई आत्माराम व मूलाराम मौलवी से पढन जाया करते थे। मुशीराम भी उनके साथ या ही चले जाते व अपने भाइयो के पास बठे रहते। जो कुछ मौलवी जी इनके दोना भाइयो को सिखात वह सब मुशीराम भी सीखते जात। उनकी बुद्धि बचपन से ही बडी प्रखर थी।

लाला नानक चन्द की बदली जब बरेली से बदायू कोट इस्पक्टर के पद पर हो गयी थी, मुशीराम तब बड हो गए थे। वह अपने पिता के साथ कोट चले जाते थे। वहा मुहर्रिर, मुशियो, वकीलो के साथ घूमते व खेलते रहते थे। जिनस प्रसन्न हाकर कागज, कलम दवात आदि इनाम में मिलते थे।

इन्ही कागजो पर दिन भर वह उर्दू, फारसी लिपि के अक्षर लिखन का अभ्यास करते रहते थे।

बदायू के बाद मुशीराम के पिता नानक चन्द की बदली बनारस हो गयी। बनारस म उनकी पदोन्नति निरीक्षक पुलिस इन्स्पेक्टर पद पर हो गयी थी। उनको प्राय दौरे पर रहना पडता था। इस वजह से उनका परिवार अकेला रहना था। इसलिए लाला नानक चन्द न एक पजाबी परिवार को बिना किराये के ही अपन मकान में जगह दे ताकि उनक बच्चो की अच्छी तरह देखभाल हो सके।

पर वह पजाबी परिवार मे रहने के कारण धर्मान्ध और छुआछूत के विचारो से ग्रस्त था। बात बात पर पुराणपंथी आचरण करने के कारण नानक चन्द के परिवार पर भी इस पजाबी परिवार का असर पडा। बालक मुशीराम भी देखा-देखी छुआ छूत का विचार करने लगा।

लाला नानक चन्द अपने परिवार को इस तरह के दुष्प्रभाव से मुक्त रखना चाहते थे। इसलिए उन्होंने इस मतिभ्रष्ट परिवार को अपने मकान से हटा दिया।

2 नयी दिशा की ओर

उस जमाने की जैसी परम्परा थी कि बच्चो की शिक्षा का कोई समुचित प्रबध नही था। उन दिनो स्कूल कालेज समुचित मात्रा मे नही थे। पर बनारस आने पर नानक चद का ध्यान अपने बच्चो की शिक्षा की ओर गया।

उन्होने अपने बच्चो को पढाने के लिए एक हिन्दी अध्यापक को लगा दिया जो घर पर ही आकर बच्चो को पढाने लगा।

पर नानक चन्द अपने बच्चो की इस तरह की शिक्षा-व्यवस्था से ज्यादा दिन सन्तुष्ट नही रहे। कुछ दिनो बाद पिता नानक चन्द ने अपने सारे बच्चो को एक अच्छी पाठशाला मे भरती करा दिया। बालक मुशी राम की विधिवत शिक्षा तो बनारस मे ही आकर आरम्भ हुई। उनके बडे भाई तो बरेली-बदायू मे भी मदरसों मे पढते थे। बनारस आकर सब बच्चे हिन्दी पढने लगे थे।

काशी मे ही नानक चन्द ने मुशी राम का यज्ञोपवीत सस्कार किया। लाला नानक चन्द बडे कर्मकाण्डी और पुरातन परम्पराओ पर विश्वास करने वाले थे। वे बडे पूजा-पाठी और शिव भक्त थे। प्रतिदिन रामायण पाठ करते थे।

मुशी राम की माता भी बहुत धार्मिक प्रवृत्ति की एवं सुशील स्वभाव की महिला थी। वे अपने बच्चो को बहुत प्यार करती थी। उनके और पिता के धार्मिक सस्कार उनके बच्चों म आय थे। पुलिस जसे भ्रष्ट विभाग मे रहने के बावजूद नानक चन्द अपने पूजा के नियमों का पालन करते रहते थे।

इस प्रकार धर्मपरायण माता पिता के धार्मिक विचारो का पूरा प्रभाव मुशीराम पर पडा।

यज्ञोपवीत संस्कार के बाद उन दिनो बालक को ऋषि कुल या गुरुकुल भेजने की परम्परा थी। पर उन दिनों कोई ऋषि कुल या गुरु कुल नही था। इसलिए यह कर्मकाण्ड औपचारिक रूप से ही हुआ था। उनके साथ भी गुरुकुल जाने का नाटक सपन्न किया गया था। जिसका दुष्प्रभाव बालक मुशीराम पर बुरी तरह पड़ा। उनके बाल मन पर इस पाखड का इतना खराब असर पडा कि उन्हें इस तरह के धार्मिक सस्कारों के प्रति वितृष्णा हो गई।

नानक चन्द प्रात काल उठकर दनिक क्रियाओ से निवत होकर बडे ही भक्ति भाव से शिव-पूजा करते थे। माता पिता की देखा देखी मुशीराम भी इन धार्मिक सस्कारो म अपना ध्यान लगाते थे। धर्म क प्रति कोई आस्था उनके मन मे नही थी। जो कुछ था वह धार्मिक सस्कारो का प्रभाव था।

उन दिनो बनारस मे स्वामी दयानन्द का आगमन हुआ। जो उन दिनो निराकार भगवान का प्रचार कर रहे थे। मूर्ति पूजा, धार्मिक सस्कारो पर कुठाराघात कर रह थे। उनके नास्तिक विचारो से धर्मा वलम्बियो न उन्हें जादूगर कहना शुरू कर दिया।

उनके बाकी सब अवगुणो को छोडकर उनका विशालकाय शरीर और मुह पर जो तेज विद्यमान था, वह उनके विरोधियो को जादू सा लगता था।

यह आर्य धर्म के प्रचार का दौर था। इस तरह की अफवाह उडते उडते मुशीराम के घर तक भी पहुची। उनकी मा ने अपने सारे बच्चो का घर से निकलना बन्द कर दिया। उन्हें डर था कि कहीं इन बच्चो को दयानन्द नाम का यह जादूगर गायब कर न ले जाये।

भाग्य की यह कसी विडम्बना है कि जिस व्यक्ति न बडे होकर आर्य समाज का उत्थान किया उसी को बचपन म इस डर से घर से न निकलने दिया गया कि यह कही बिगड न जाय।

बनारस मे डेढ़ साल रहने के बाद ही नानक चद की फिर बांदा बदली हो गयी। अपने पूरे परिवार के साथ नानक चन्द बांदा आ गये।

मुंशीराम बांदा मे भी पढने लगे। काशी के धार्मिक सांस्कारिक वातावरण मे रहने के बाद, बांदा जैसे इलाके म रहन पर मुंशीराम को बहुत कठिनाइयां आयी।

उनका मन बांदा मे नही लगता था। बांदा तब भी आज की ही भांति सस्कारविहीन उजड्ड सा शहर था।

मन के परिताप से शरीर को भी अपार कष्ट मिला और बालक मुंशीराम बीमार पड गये। बहुत से डॉक्टर, वद्य, हकीमों का इलाज चला पर व्यथ ही रहा। मुंशीराम ठीक ही नही हुए।

तब नानक च द को बांदा शहर के निवासी ने बुद्धू भगत का पता बतलाया। नानक चन्द न बुद्धू भगत को अपने घर बुलवाया। बुद्धू भगत न मुंशीराम को देखा भाला फिर कुछ अपन निदान से दवाए दी।

भाग्यवश उन दवाओं ने रामबाण का काम किया। मुंशीराम उन दवाओ से रोग मुक्त होने लगे। धीरे धीरे बुद्धू भगत की दवाओ के प्रभाव से बिलकुल रोग मुक्त हो गये।

अपने प्राण बचाने वाले बुद्धू भगत के प्रति मुंशीराम मे बहुत आदर की भावना थी। वह उनके हर प्रकार से एहसान मद थे।

कहत हैं बुद्धू भगत पहले बहुत लडाकू प्रवत्ति के व्यक्ति थे। एक-दूसरे पर मुकदमा करना और लडना झगडना उनका स्वभाव था। अपन इसी स्वभाव के कारण वह पक्के मुकदमेबाज बन गये थे। साथ साथ ही वह बहुत कजूस थे।

एक दिन बुद्धू भगत को कहीं रामायण सुनने का अवसर मिला। रामायण सुनकर तो जैसे बुद्धू भगत की आखें ही खुल गयी। उस दिन से बुद्धू भगत ने लडाई-झगडा बन्द कर दिया और जनहित के काम मे लग गये।

बुद्धू भगत ने कजूसी को भी तिलाजलि दे दी और मानवतावादी हो गये। वह लोगो का निशुल्क इलाज करने लगे। सही मायना मे तब ही से उनका नाम बुद्धू भगत पडा।

स्वस्थ होने के बाद मुंशीराम, अपन पिता नानक चन्द के साथ

बुद्धू भगत के घर रामायण सुनने जाने लगे। जिस कारण बालक मुंशी राम का लगाव रामायण से बढने लगा। वे रामायण पढने के साथ साथ उससे अच्छी तरह शिक्षा भी ग्रहण करने लगे। जिस कारण मुंशीराम के मन में मानव प्रेम, सहयोग और सच्चाई के प्रति अनुराग जागने लगा।

बादा के समीप ही चित्रकूट नामक धर्म स्थल है। जहां अपने बन वास के समय भगवान राम ने काफी लम्बा समय गुजारा था। यहीं राजापुर नामक ग्राम में गोस्वामी तुलसीदास ने जन्म लिया और चित्रकूट में रहकर ही रामायण की रचना की थी।

मुंशीराम के पिता नानक चंद एक बार सपरिवार इसी चित्रकूट की यात्रा पर आये। चित्रकूट में उस समय राम लक्ष्मण और सीता की कुटी सुरक्षित थी।

चित्रकूट में यति नामक एक पहाडी थी जिसकी चट्टान को कुछ पंडों ने लक्ष्मण जी की आखेट स्थली बतलाया जिसके प्रमाणस्वरूप उन्होंने चट्टानों पर पडे निशानों को लक्ष्मण के तीरों का निशान बतलाया। यह निशान चट्टानों पर थे और नीचे की ओर चले गये थे।

मुंशीराम को चट्टानों के सम्बन्ध में पंडों का यह प्रचार विश्वास लायक नहीं लगा। कुछ दिन बाद जब अंग्रेजों ने उस चट्टान की खुदाई कराई तो वहां कुछ भी नहीं निकला।

मुंशीराम के धार्मिक संस्कारिक मन पर इस घटना से कठोर चोट लगी। धर्म के प्रति उनकी आस्था ज्यों ज्यों बढ रही थी त्यों त्यों पाखंड के प्रति उनके मन में घृणा जाग रही थी। जो आगे चलकर उनके व्यक्तित्व का एक विशेष हिस्सा बनी। जिसने उन्हें महात्मा और स्वामी जैसा आदरणीय स्थान दिया।

बादा से अबकी बार नानक चन्द की बदली मिर्जापुर हो गयी। जहां फिर सारे परिवार सहित नानक चंद जा पहुंचे।

मिर्जापुर में बच्चे फिर पाठशालाओं में पढने लगे। पिता का जीवन अपनी नौकरी की ओर पूरी तरह समर्पित था। मां अपने बच्चों की पढाई लिखाई और संस्कारों के प्रति बहुत सजग थी। वह अपने

बच्चो को ईमानदार, नक धमजागरूक देखना चाहती थी। साथ ही साथ उनके बच्चो मे सात्विक प्रवृत्तिया हों। यह उनकी कामना थी। सबसे छोट होने के कारण मु शीराम उनके स्नह, लाड प्यार क प्रमुख के द्र थे।

वि याचल म नवरात्र के समय विशाल मेले का आयोजन होता है। जिसमे दूर दूर से भक्तगण आकर दुर्गा जी का आवाहन करत ह। मिर्जापुर मे वसा नानक चद का धमभीरु परिवार इस आयाजन से कैस दूर रहता।

चत्र के नवरात्र म लाला नानक चद सपरिवार देवी विध्यवासिनी की पूजा अचना करने विध्याचल जा पहुचे। मुशीराम भी उनके साथ थे। वह भी मेले मे आये साधुओ वरागियो का देख रह थे और धामिक स्थलो के दशन कर रहे थे।

मु शीराम अब बाल से किशार अवस्था को पहुच रह थे और तात्कालिक बुद्धि के प्रभाव स कुछ अधिक विद्वान थे। उन्हें यह लगा कि देवी देवता तो अपनी जगह महान हैं। पर कुछ पाखडी लोगा ने स्वाथवश धम के नाम पर अनक वेकार बातें फला दी हैं। जिससे मुशीराम के मन मे जहा धम के नाम पर सहिष्णुता थी वहीं पाखड स घृणा पदा हा गई।

लेकिन विध्यवासिनी के इसी मेले मे कुछ कम्युनिस्ट विचारधारा के कायकर्ता भी मुशीराम के सम्पक मे आये। पर उनकी विचारधारा और कर्मों मे मुशीराम का जमीन आसमान का अ तर महसूस हुआ।

इस मेले मे घटी एक छोटी सी घटना न मु शीराम को एक नयी दिशा की ओर मोड दिया। यो तो घटना बहुत ही मामूली थी। एक स्थान पर एक ब्राह्मण का भोजन पक रहा था। एक नौकर ने चूल्हे से आग निकाल ली। जिस पर ब्राह्मण देवता कुपित हो गये। उन्होन उस भोजन को लात मार दी। नौकर का ता अनेक शाप दे ही डाले। उन ब्राह्मण देवता के अनुसार उनका धम भ्रष्ट हो गया।

मुशीराम को यह जानकर बहुत आश्चर्य हुआ कि उन ब्राह्मण देवता का धम इतना सकुचित था। जो जलती आग को छू जाने

ही नष्ट हो गया।

इसी तरह उनके घर के नौकर जोखू मिश्र का भोजन जिस चूल्हे पर पक रहा था। उस चूल्हे से थोड़ी सी आग वह भी एक चिमट द्वारा एक अन्य व्यक्ति ने ले ली जिस पर जोखू मिश्र ने बहुत बावला मचाया। उनका भी धर्म भ्रष्ट हो गया था।

यह सुनकर मुंशीराम को इस धर्म नाम से सख्त घृणा हो गई। जोखू मिश्र गांजा शराब तम्बाकू जैसी नशीली चीजों का सेवन करते थे। ऐसे व्यक्तियों का धर्म, इन दुष्कर्मों से नष्ट नहीं होता। पर इस तरह किसी व्यक्ति के चूल्हे की आग छू जाने से धर्म भ्रष्ट हो जाता है। क्या धर्म इतना सस्ता और इतनी हल्की वस्तु है, जो व्यक्ति के स्पर्श से भी नष्ट हो रहा है।

इस तरह के धर्म से मुन्शीराम को बुरी तरह नफरत हो रही थी। धर्म के पाखंड से पैदा हुई नफरत ने ही उनके मन में एक नये धर्म, एक नये समाज के बीज बो दिए थे। जो आगे चलकर एक ऐसा धर्म बना जिसने लाखों भारतवासियों को एक नयी दिशा दी।

3 जिनसे प्रभावित हुए !

मुशीराम की पढ़ाई लिखाई स्थान स्थान विचरते रहने के कारण कभी व्यवस्थित रूप मे नही हो पायी थी। पर उन्हें घूमने फिरने के कारण जीवन की बहुत सी कठिन परिस्थितियो का सामना करना पडा, कई बहुत ही कड़ुए अनुभवो का सामना करना पडा। जीवन के इन कड़ुए मीठे अनुभवो ने उनके बीच एक जीवन का नया आधार तय कर दिया था।

सन् 1871 ई० मे नानक चद की पदोन्नति शहर कोतवाल बनारस के पद पर हो गयी। नानक चद दोबारा सपरिवार बनारस जा पहुचे।

अबकी बार मुशीराम को कण घटा स्कूल म पढन के लिए भरती कराया गया था। इसके अलावा घर पर फारसी और अग्रेजी पढन की व्यवस्था भी की गयी।

नियमित रूप से स्कूल जान के कारण मुशीराम नियमित रूप से बहुत सुबह उठ जाते। दैनिक कार्यों से निबटकर गगाजी जाते, वहा कसरत कुश्ती का अभ्यास करते, उसके बाद गगा-स्नान कर भगवान विश्वनाथ के दशन कर घर आते और अपनी पढाई लिखाई मे जुट जाते। वहा से स्कूल जाते थे। वह एक बुद्धिमान और अध्ययनशील छात्र थे। इसलिए शीघ्र ही अपने स्कूल म उनका व्यक्तित्व अलग उभरकर सामने आया।

बनारस मे ही मुशीराम की मुलाकात डाकू सग्राम सिंह से हुई थी, जो बहुत देशभक्त था।

सग्राम सिंह बनारस शहर के पास स्थित एक गाव का साधारण किसान था। वह अपनी महनत और जमीन के बल पर अपना व परिवार

का भरण पोषण करता था। उसका जीवन सीधे साद ढग स गुजर रहा था। एक दिन किसी सदह पर पुलिस न उसके घर का तलाशी ल डाली। तलाशी म जब पुलिस को कुछ नही मिला तो उन्हा उसका पत्नी के साथ बलात्कार किया।

पुलिस के दुष्कम स गाव वाला को सग्राम सिह का खिल्ली उडान का मौका मिल गया। सग्राम सिह के घर आने पर गाव वाला न सारा किस्सा नमक मिच लगाकर सुनाया। जिससे सग्राम सिह बहुत ही आदोलित हुआ। उसन इस घटना की शिकायत पुलिस के उच्चाधिकारियो से की। पर उसकी फरियाद पर किसी व्यक्ति ने ध्यान नहीं दिया।

निराश सग्राम सिह जब अपन घर आया तब उसका हृदय प्रतिशोध की आग स बुरी तरह जल रहा था। क्रोध मे जलत हुए उसन अपनी वर्षो पुरानी तलवार निकाली और सबसे पहले अपनी पत्नी के टुकड टुकड कर डाले। अब अपनी पत्नी के सतीत्व को भग करने वालो का मौत की नीद सुलान का सकल्प लेकर वह सदा सदा के लिए अपना घर छोडकर जगल म जा छिपा।

वहा उसे एक और राजपूत मिला जो उसी की तरह सताया हुआ इसान था। उसका नाम हाथी सिह था। वह एक बहुत ही अच्छा निशानबाज था।

दोनो न मिलकर आसपास के इलाके म आतक फला दिया। उनक कारनाम सुनकर अनक अग्रेजी सरकार के जुल्मो सितम के शिकार भी उनक साथ इकट्ठे होन लग व एक अच्छा खासा गिरोह बन गया। सग्राम सिह उस गिरोह का सरदार बन गया था।

सग्राम सिह न अमीरा का लूटना आर गरीबो का भला करना प्रारम्भ कर दिया था। बनारस जौनपुर और आजमगढ म सग्राम सिह न अपनी सफलता और उदारता के झड गाड दिय। पुलिस ने कई बार सशस्त्र आक्रमण कर उनक गिरोह के छक्के छुडान का प्रयास किया। परतु उन्हें सफलता हासिल नही हुई। अग्रेज सुपरिटेंडेंट पुलिस को सग्राम सिह ने पकड लिया और चेतावनी देकर जिंदा छोड दिया।

बनारस शहर मे भी उसके आक्रमण होते रहते थे। आलम सिंह नामक एक पुलिस अधिकारी न सग्राम सिह को पकडन के अनेक प्रयत्न किए पर सब व्यथ ही रह। सग्राम सिह सारे हमलो को धत्ता बतला कर निकल भागता। तब आकर तान जिला की पुलिस ने मिलकर सग्राम सिह को पकडन का बीडा उठाया। हजारा पुलिस के जवाना ने सारे इलाके का बुरी तरह घर लिया।

सग्राम सिह के लिए अब छुपना कठिन हो गया। पुलिस का सामना करना उससे भी कठिन काय था। हजारो जवाना न सारे रास्ता की नाकाबन्दी कर दी थी। जिसमे सग्राम सिह के गिरोह को भोजन और पानी के लाले पड गए। पाच छह दिन अपन साथिया के साथ इधर-उधर भूखे प्यास घमत रहन के बाद सग्राम सिह का गिरोह भोजन की तलाश म निकला। उनका एक आदमी नानक च द के हाथ आ गया। उससे पूछताछ करन के बाद सारा पुलिस दल, सग्राम सिह को गिरफ्तार करन के लिए उस आदमी द्वारा बतलाए हुए माग पर चला।

सग्राम सिह पुलिस का आता देखकर एक चमार के घर मे घुस गया। पुलिस न सग्राम सिह को इस झापडी मे छुपता देख लिया था। उन्हान उस झापडी म आग लगा दी। पानी की नमी के कारण बारूद अपना काम न दिखला सकी। उसकी बदूक पानी मे बेकार सिद्ध हुई। तलवार भी म्यान म फस गयी। सग्राम सिह झापडी स बाहर आया तो उसे पुलिस न चारा आर से घर लिया।

सग्राम सिह न ब दूक के कु दे से प्रहार करना चाहा, परन्तु तब तक पुलिस न उसे चारा ओर से घेर लिया और सग्राम सिह को गालिया से भेद दिया। पुलिस न सग्राम सिह का घायल अवस्था म ही रस्सियो से बाध दिया और बनारस के अस्पताल मे पहुँचा दिया।

नानक चद न ही सग्राम सिह को पकडा था। इसलिए उसके बन्दी बनाए जान पर मुशीराम उसको देखन के लिए बनारस के अस्पताल म गय। उस देशभक्त वीर पुरुष की यह हालत देखकर मुशीराम का हृदय दुख स भर गया। स्वय अग्रेज पुलिस कप्तान सग्राम सिह की बहादुरी और देश प्रेम से बहुत प्रभावित हुआ।

बाद मे स्वस्थ हो जाने पर सग्राम सिंह को फासी पर लटका दिया गया। मशीराम को सग्राम सिंह के देश प्रेम ने बहुत ज्यादा प्रभावित किया। अग्रेजो के प्रति सग्राम सिंह ने उनके मन मे बहुत गहरी घृणा की भावना भर दी। यही भावनाए आगे चलकर मुशीराम के व्यक्तित्व का एक ऐसा अंश बनी जिसने उनको सच्चा देशभक्त और गरीबो का सच्चा हमदर्द और हितचिंतक बनाया।

दूसरा व्यक्तित्व स्वामी दयानन्द का था। जिसने मुशीराम के जीवन का बिल्कुल मोड दिया। उनकी माता उनको व उनके बड़े भाई को ज्यादा देर घर से बाहर नहीं रहने देती थी।

उनके मन मे यह भय था कि यह जादूगर और नास्तिक स्वामी दयानन्द उनके बच्चो को बिगाड देगा व उन्हें पथभ्रष्ट कर पाप का गलत राह पर ले जाएगा। जब भी उनको पता लगता, स्वामी दयानन्द बनारस आए हुए है, वह अपने बच्चो को घर के अन्दर छिपा लेती।

बेचारी माता को क्या पता था, इन्ही स्वामी दयानद की कृपा से उनका बेटा मुशीराम एक दिन महान आर्य नेता स्वामी श्रद्धानन्द बनेगा जिसके आसपास वाकई श्रद्धा और प्रेम की अनोखी गंगा बहेगी, जो कभी सूखेगी नही।

मुशीराम के मन मे धार्मिक अंधविश्वास पाखंड के प्रति तीव्र घृणा की भावना थी। बनारस मे घटी एक घटना ने इस घृणा को और अधिक बढ़ा दिया।

बनारस से कुछ दूर गंगा किनारे सोधिया घाट नामक एक स्थान है। मुशीराम उस निर्जन स्थान पर ध्यान मग्न थे। वहां से गंगा का वह किनारा बहुत बुरी तरह दुष्प्रभावित हुआ था। उस इलाके मे एक गुफा भी बन गयी थी। उस गुफा मे एक नागा साधु आकर रहने लगा। इस नागा साधु का एक विचित्र नियम था। यह साधु जो पहले भोजन लाता उसका भोजन स्वीकार कर लेता, बाकी लाने वालो को डाटकर भगा देता। इसलिए हर भक्त पहले भोजन स्वीकार हो जाय यह सोच कर जल्दी से जल्दी जा पहुचता।

एक दिन मुशीराम सुबह-सुबह अपने एक नौकर के साथ घूमने

निकले। घाट पर गुफा के पास पहुंचते ही उनके कानों में एक स्त्री की चीख की आवाज सुनाई पड़ी। मुशीराम दौड़कर गुफा के द्वार पर गये तो उन्होंने एक स्त्री को गुफा के द्वार को दोनों हाथों से पकड़े हुए देखा। स्त्री बुरी तरह चीख रही थी। ऐसा लगता था जैसे कोई उसे बुरी तरह पीछे की ओर घसीट रहा है। वह स्त्री बुरी तरह बाहर निकलने का प्रयास कर रही थी।

मुशीराम और उनके नौकर ने उस स्त्री को, हाथ पकड़कर अपनी ओर घसीटना चाहा किंतु वह असफल रहे। अन्दर से स्त्री को अपनी ओर घसीटने वाला भी कम ताकतवर नहीं था।

उनके नौकर बिदासिंह और मुशीराम ने साधु को डराया धमकाया, तब उस साधु ने बड़ी मुश्किल से उस अबला स्त्री को छोड़ा।

इस खींचतान भरे अपमान से, कुछ डर से, वह स्त्री मूर्छित हो गयी। तभी एक अधेड़ उम्र की स्त्री सामने आई। उसने अपना शाल उस मूर्छित स्त्री को ओढ़ा दिया। इन्होंने उस नागा साधु को बहुत डांटा।

मुशीराम जी उस अधेड़ स्त्री को पहचान गये। वह उनके घर के पास रहने वाले एक सम्मान्त खत्री परिवार की महिला थी। मुशीराम ने उस महिला से उस घटना के सम्बन्ध में पूछा तो उस प्रौढ़ महिला ने बतलाया कि वह उस बेहोश स्त्री की जेठानी है। उसकी देवरानी जो बेहोश पड़ी थी निसंतान थी जिसे दिखलाने के लिए वह साधु के पास लायी थी कि साधु के आशीर्वाद से उसकी देवरानी को भी पुत्र प्राप्त हो।

उस रोज अपनी देवरानी के साथ वह सर्व प्रथम साधु के लिए भोजन लेकर आई थी। साधु की नियति उसकी देवरानी को देखकर खराब हो गयी जिसके साथ उसने बलात्कार करने की चेष्टा की। जिससे उसके शरीर पर खरोंचें आयी और कपड़े तार-तार हो गये। उन्होंने और उनके नौकर ने उस नागा साधु की अच्छी खासी पिटाई कर दी। जब उस साधु ने सबके सामने नाक रगड़कर माफी मांगी और यह वायदा किया कि वह आइन्दा कभी बनारस नहीं आयेगा तब उसे छोड़ दिया।

मुशीराम ने स्वय उस बेहोश स्त्री को व उसकी जेठानी का उसके घर पहुचा दिया और उस स्त्री के घर वालो को सारी घटना बतला दी व भविष्य के लिए सचेत कर दिया।

उन्हे इस घटना स धर्म के नाम पर फले अ धकार से बहुत चोट पहुची।

एक दिन जब वह पुन सोधिया घाट पर पहुचे, उ होने उस भ्रष्ट नागा साधु को फिर घाट पर धनी रमाय बैठे देखा। लोग उस साधु को बडे ही भक्ति भाव से भट दे रहे थे।

भ्रष्ट साधु को मिलता हुआ यह सम्मान मुशीराम को फूटी आखो नही सुहाया।

बनारस की इन घटनाओ ने मुशीराम के जीवन को एक नया मोड दिया। वह बडी असमजस की स्थिति मे फस गये। कहा जायें, क्या करें ? उनकी समझ म कुछ नही आ रहा था।

4 सगाई

एक साल बाद नानक चन्द का तबादला फिर बलिया हो गया। हमेशा की तरह मुंशीराम उनकी मां, बहन, भाई सभी लोग बलिया जा पहुंचे। जहां मुंशीराम को एक ऐसे स्कूल में भरती कराया गया, जहां अन्य विषयों के अलावा अंग्रेजी भी पढनी पडती थी। अब तक मुंशीराम अपने घर पर रहकर ही अलग से अंग्रेजी का अध्ययन करते थे। उस स्कूल के हेडमास्टर एक बंगाली सज्जन मुकर्जी महाशय थे जो विद्वान एवं अनुभवी व्यक्ति थे।

मुकर्जी महाशय ने कुछ ही समय में मुंशीराम की प्रतिभा को पहचान लिया। इस स्कूल में आकर मुंशीराम को दो बार पुरस्कार मिला।

मुंशीराम को बनारस से ही कसरत कुश्ती का शौक लग गया था। बनारस के खुले वातावरण में शारीरिक सौष्ठव के बाद बलिया के उन्मुक्त इलाके में उन्हें व्यायाम और शहरी बनाने के नये नये आयाम मिले। उन्होंने गदा चलाना, कुश्ती लडना जैसे शारीरिक व्यायाम करने आरम्भ कर दिये। ये उनके शौकिया कम थे।

उनके पिता नानक चन्द उनसे बहुत प्रभावित थे। उन्होंने मुंशीराम को उच्च शिक्षा दिलवाने का दृढ निश्चय कर लिया।

सन 1973 के दिनों में बलिया में उच्च शिक्षा का कोई केन्द्र नहीं था। इस कारण उनको बनारस के क्वीन्स कालेज में भरती कराया गया। बनारस उस समय उच्च शिक्षा का केंद्र था। जहां दूर दूर से विद्यार्थी पढने आते थे।

बनारस का क्वीस कालेज पढाई लिखाई और सुव्यवस्था के लिए सारे शिक्षा जगत में प्रसिद्ध था।

इस बार मुंशीराम अकेले पिता की आज्ञा पर पढ़ने के लिए आये थे। इससे पूर्व भी दो बार वह बनारस में निवास कर गये थे। पर इस जीवन में उस जीवन से जमीन आसमान का अन्तर है। तब वे अल्हड़ किशोर थे। अपरिपक्व विचारों के थे। तब हर चीज से वे शीघ्र प्रभावित हो जाते थे।

अब वह पढ़े लिखे विचारशील व्यक्ति थे। संयमित जीवन, पढ़ाई लिखाई में उनके सोचने समझने का ढंग बदल गया था। मुंशीराम का स्वास्थ्य निखर आया था। उनके विचारों में तर्क शक्ति आ गई थी। मनन और अध्ययन द्वारा वह किसी भी विषय में उनके गुण दोषों को पहचानने लगे थे। उनके सोचने समझने में परिमार्जन के साथ सुन्दरता भी आ गई थी।

बनारस का वातावरण अनेक विचित्रताओं से भरा हुआ था। चारों ओर धार्मिक वातावरण के साथ साथ पाखण्ड और बेईमानी का राज्य था। धर्म की आड़ में अनेक असामाजिक तत्त्व सक्रिय थे जो चाकू छुरों से लैस रहते थे। अनेक विद्यार्थी भी इस तरह के असामाजिक तत्त्वों के साथ मिले हुए थे। मुंशीराम को यह सब देखकर बहुत क्रोध आया और उनका मन दुख से भर गया। वे भी अपने आप को किसी से कम नहीं समझते थे। बल्कि विद्यार्थी समाज में और उनके अध्यापकों तक की निगाह में उनका एक विशेष स्थान था। वह एक उच्च पुलिस अधिकारी के पुत्र थे।

मुंशीराम ने भी औरों की तरह अपने पास एक बड़ा-सा छुरा रखना शुरू कर दिया। वह शरीर से बलिष्ठ थे ही, नौजवान दोस्तों की फौज साथ रहती। वह मोर्चे बनाकर असामाजिक तत्त्वों से भिड़ जाते व अपने दोस्तों की रक्षा करते। उनके पास डर या भय नाम की कोई भावना नहीं थी। बल्कि समाज के लिए कुछ न कुछ करते रहना ही उनका स्वभाव बन गया था। उनकी यही आदतें आगे चल कर उन्हें महात्मा बनाने में काम आयीं।

उन दिनों मुंशीराम ने अपने अनेक दोस्तों को गुंडों के चंगुल से छुड़ाया था। कई छद्मवेशी साधुओं, व्यभिचारियों को पकड़ा था। कई

अगलाओं को इन दुष्टों के पंजे से छुड़ाया था। ऐसे अवसरों पर वह अपने साथियों सहित भिड़ जाते थे। उनके ऊपर इस समय सबक सिखलाने की भावना रहती थी। यह भावना परोपकार से ज्यादा कुछ कर गुजरने की भावना थी।

अपने मां-बाप से दूर रहकर वह एकांत जीवन बिता रहे थे। उन्हें रोकने टोकने वाला कोई था नहीं। इस तरह स्वावलम्बन स्वाभिमान व उत्तरदायित्व के प्रति सजगता की भावना उनमें पूरी तरह जाग्रत हो गयी थी। जो आगे चलकर उनके सफल जीवन का एक बहुत बड़ा सद्गुण बनी।

जिन दिनों मुंशीराम नवीं श्रेणी में पढ़ रहे थे परीक्षा के ही दिनों में उन्हें अपने पिता का बलिया से पत्र मिला। पत्र में लिखा था परीक्षा देते ही अपने पतृक घर तलवन पहुंच जाना। मुंशीराम ने बड़े उत्साह से तलवन जाने और परीक्षा देने की तैयारी कर डाली।

पर अचानक एक बाधा आ गयी। उनका अन्तिम प्रश्नपत्र अंग्रेजी का था जो किसी तरह लीक हो गया। हेड मास्टर ने इस प्रश्नपत्र की दो दिन बाद लेने की घोषणा की।

पर मुंशीराम तो अपने घर जाने को तैयार बैठे हुए थे। इसलिए उन्होंने दो दिन बाद होने वाला अंग्रेजी का इम्तहान छोड़ दिया और बिना अंग्रेजी की परीक्षा दिए तलवन चल पड़े।

उस समय भावनावश उन्होंने यह नहीं सोचा कि इस उतावलेपन की भावना के कारण उनका पूरा साल बेकार हो जाएगा। किंतु युवावस्था में शादी-ब्याह के मामले में जो उतावलापन होता है मुंशीराम की भी वही स्थिति थी। उस समय तलवन में उनकी सगाई होने वाली थी। इस कारण बिना परिणाम की परवाह किये वह तलवन जा पहुंचे।

तलवन में मुंशीराम की सगाई की बात पक्की हो गयी थी। जालंधर के रईस साहूकार राय शालिगराम की सुपुत्री शिव देवी से मुंशीराम का विवाह निश्चित हुआ।

राय शालिगराम का परिवार उस समय पूरे पंजाब में प्रतिष्ठित परिवार था। राय शालिगराम के एक पुत्र बैरिस्टर रायजादा भक्तराम

सारे पजाब मे प्रसिद्ध फौजदारी के वकील थे। इसके अलावा पजाब म पहली क या पाठशाला खोलने वाले लाला देवराज भी उनके पुत्र थे। जो आगे चलकर स्वामी श्रद्धान द के बहुत काम आय व हमेशा उनका साथ दिया।

लाला शालिगराम का परिवार अत्यधिक सम्प न था। उनके कुल चार लडके थे। जो एक से एक बढकर लायक थे।

सबमे बड बालकराम, प्रसिद्ध बैरिस्टर भगतराम, लाला देवराज और लाला हसराज थे। लाला हसराज डी० ए० वी० कॉलेज के सस्थापक थे। दिल्ली म हसराज कालेज भी उनकी ही देन है।

इस प्रकार एक बहुत ही सम्पन्न और प्रतिष्ठित परिवार म उत्पन्न हुई क या शिव दवी से उनका विवाह सम्प न हुआ था। लडका वाले कइ सालो से यह चाहते थे कि नानक च द सगाई पक्की कर लें। विवाह ता जब वह चाहेंगे तब कर दिया जायेगा। इसीलिए नानक च न मुशाराम को तलवन बुलाया था।

तलवन मे माता पिता के आशीर्वाद से मुशीराम की सगाई सम्प न हुई थी। गाव मे दस प द्रह दिन रुककर अपन पिता क साथ बलिया जा पहुचे। कुछ दिन बलिया म रहकर फिर बनारस के अपन छात्रावास मे जा पहुचे।

अग्रजी का प्रश्नपत्र छोडकर जा पहुचन का परिणाम अब सामने आया। परीक्षाफल असतोषजनक आया। विवाह सगाई की उतावली युवा उम्र म हरएक के मन मे हाती है। मुशीराम भी इसमे अछूत न थे।

5 मोतीलाल नेहरू से भेंट

परीक्षा मे असफल रह जान के कारण, मुशीराम का छोडकर उनके सब साथी आगे की कक्षाओ म जा पहुचे। इस कारण अब मुशीराम का मन पुरान स्कूल म न लगा। फिर भी अध्ययन जारी था।

मुशीराम पुरानी किताबो मे मन लगान के स्थान पर कबाडा या पुस्तक विक्रेताओ के पास से अग्रेजी क पुरान व नय उपन्यास पढन लगे। मन बहलान का यह अच्छा साधन तो था ही—साथ ही साथ अग्रेजी भाषा पर उनका अधिकार बढन लगा। नतीजा यह हुआ जब विद्यालय का सत्र समाप्त हुआ तो मुशीराम न पुन परीक्षा दी। इस बार उन्ह सफल होन की पूरी उम्मीद थी।

परीक्षा देकर वह पुन अपन पिता के घर बलिया जा पहुचे। जहा वे अपन साथ ढेरो अग्रेजी क उपन्यास ले गय थे। सारा रात चाद की रोशनी मे वह उपन्यास पढत रहते थे। इस तरह पाठय पुस्तको के अलावा इस तरह के अध्ययन से उनको जीवन के विभिन्न रूपो का ज्ञान मिला।

मैट्रिक की परीक्षा उन्होन जयनारायण क्रिश्चियन विद्यालय स उत्तीर्ण की।

क्वीस कालेज बनारस से उन्होन फिर इट्रेस मे दाखिला ले लिया। उस समय क्वीस कालज के प्रधानाचार्य मथुरा प्रसाद थे। जो अपन दृढ अनुशासन और विद्वत्ता के लिए बहुत विख्यात थे। उनकी देख रेख म मुशीराम न इट्रेस पास कर लिया। उस समय तक मुशीराम अपन विचारो से काफी परिपक्व हो चुके थ, शरीर से स्वस्थ थे। मन स, विचारो स वह बहुत विचारशील थे।

सन् 1875 ई० मे मुशीराम न इट्रेस की परीक्षा पास की। उसी साल उन पर वज्राघात हो गया। अचानक ही उनकी माता का स्वर्गवास हो गया। माता के निधन का मुशीराम पर बहुत बुरा असर पड़ा,

अपनी माता से उन्हें सबसे ज्यादा लगाव था। उनके ऊपर मा का बहुत गहरा प्रभाव पड़ा था। जिस मा की शीतल छाया में उन्होंने अपना युवावस्था, बचपन गुजारा था, उसका अचानक साथ छूट जाना उनको बहुत गहरा घाव दे गया।

इट्रेंस पास करने के बाद मुशीराम ने क्वीस कालेज में आगे पढ़ना प्रारम्भ कर दिया। उस क्वीस कालेज के प्राचार्य श्री गिफ्थ थे। उन्होंने भारतीय दर्शन ऋग्वेद, रामायण पर अच्छा काम किया था। साथ ही वह सहृदय और विद्वान व्यक्ति थे। उनकी प्रसिद्धि दूर दूर तक फैली हुई थी।

मुशीराम उस समय अजीब मनःस्थिति से गुजर रहे थे। कभी अध्ययनरत होते, कभी कविताये लिखते, कभी उपन्यास लिखते, कभी फक्कड मस्ती मे समय गुजारते। उसी समय क्वीस कालेज में पंडित मोतीलाल नेहरू ने प्रवेश लिया, जो मुशीराम के गुणों से प्रभावित होकर उनके परम मित्र बन गए। उनकी यह मित्रता जीवन पर्यन्त बनी रही। आगे सन 1919 के रौलट एक्ट आदोलन के समय मुशीराम और मोतीलाल नेहरू एक साथ कूद पड़े थे।

अपने कालेज के दिनों में भी मुशीराम के दैनिक जीवन में कोई परिवर्तन नहीं आया था। वही पहले की तरह नियत समय उठना, गगा किनारे व्यायाम करके गगा स्नान करना। फिर भगवान के दर्शन के लिए जाना। उनके दैनिक नियमित कार्य थे।

एक दिन एक ऐसी घटना घटी जिसने उन्हें एक बार फिर कुछ सोचने पर मजबूर कर दिया।

घटना इस प्रकार हुई—एक दिन मुशीराम को विश्वनाथ जी के मंदिर मे दर्शनो को जाने मे देर हो गयी। समय गुजर चुका था फिर भी मुशीराम नियम के पक्के थे। सीधे विश्वनाथ मंदिर जा पहुचे। पर द्वारपाल ने उन्हें प्रवेश करने से रोक दिया। पता चला, इस समय काशी नरेश की महारानी विश्वनाथ की पूजा कर रही हैं इसलिए किसी को भी प्रवेश नही करने दिया जायगा। जब महारानी की पूजा समाप्त हो जाय तभी किसी को प्रवेश करने दिया जायेगा।

भगवान के मंदिर मे बडे छोटे के बीच इस प्रकार की भेद भावना की बात देखकर मुशीराम को बहुत क्रोध आया। उन्हे भी श्रद्धा-भक्ति पर बहुत क्रोध आया।

उनके विचारशील मन मे इस भेदभावना को हमेशा के लिए समाप्त करने की बात घर कर गयी।

इसका नतीजा यह हुआ कि मूर्ति पूजा के प्रति उनके मन मे विद्रोह की भावनायें जाग गयी। उनके मन मे अनेक तर्क वितर्क उठने लगे। मूर्ति-पूजा के सम्बन्ध मे ईसाई धर्म की कई उक्तियो की ओर उनका ध्यान गया।

वे सोचते रोज ही तो कारीगर मूर्तिया बनाते हैं। ये मूर्तिया टूट-फूट जाती हैं, चोरी चली जाती हैं। आखिर मूर्ति की पूजा के पीछे भक्ति की भावना ही तो है।

भक्ति भावना बडी या मूर्ति बडी यही तर्क उन्हें परेशान करता रहा।

यद्यपि काशी विश्वनाथ मंदिर के द्वारपालो के दुर्व्यवहार ने उनके मन को बहुत ठेस पहुचायी थी। इसके बावजूद उनका मन ईश्वर की सत्ता को अस्वीकार नही कर पा रहा था। मूर्ति-पूजा के विरोध के बाद भी उन्हें ईश्वरीय शक्ति पर पूरा-पूरा भरोसा था।

6 धार्मिक पाखंड का दिग्दर्शन

अपने मन में उठते तर्क वितर्कों से मुंशीराम बहुत उद्विग्न थे। जब उन्हें कोई रास्ता सुझाई नहीं दिया तो उन्होंने अपने पुराने स्कूल नव नारायण कालेज के प्रधानाचार्य ल्यूथेल्ट से मूर्ति पूजा पर बातचीत करने के लिए उनके पास गए।

दोनों के बीच काफी लम्बी बातचीत हुई। ल्यूथेल्ट महाशय ने उनके उद्धरणों के बल पर ईसाई धर्म की विशेषता बतलाई व अनेक बातों के सहारे मूर्ति पूजा के विरोध में अपने तर्क प्रस्तुत किये। पर मुंशीराम का मन पूरी तरह सन्तुष्ट नहीं हो सका। वे अपनी खोजबीन में लगे रहे।

मन्दिरों से अलगाव होने का यह नतीजा अवश्य हुआ कि उनका ध्यान अब ईसाई धर्म और पादरियों की ओर आकर्षित हुआ। एक दिन उनकी भेंट बनारस छावनी के रास्ते में एक रोमन कैथोलिक पादरी लीफू से हुई। दोनों एक दूसरे की ओर आकर्षित हुए।

पादरी लीफू से अक्सर उनकी मुलाकात होने लगी। उन दिनों ईसाई पादरियों का काम अपने धर्म की रक्षा करने से अधिक धर्म का प्रचार करना था। इसके अलावा पादरी हिंदू मुसलमान जनता के बीच ईसाई धर्म का प्रचार प्रसार करते थे। पादरी लीफू के साथ मुंशीराम के खूब तर्क वितर्क होते थे, विचार विमर्श हुआ करते थे। परंतु मुंशीराम को कोई संतोषजनक उत्तर प्राप्त नहीं हो पाता था।

हां, यह बात जरूर है पादरी लीफू के सद्व्यवहार और विनय शीलता से मुंशीराम इतने ज्यादा प्रभावित हुए कि वह ईसाई धर्म स्वीकार करने को तैयार हो गए। उनका लगभग रोज ही चर्च और पादरियों के पास आना जाना होने लगा।

एक दिन जब मुंशीराम लीफू से मिलने उनके घर गए, घर के

दरवाजा खुला था। वह निसकोच उनके घर के अन्दर चले गये। पर्दा उठाया तो लीफू महाशय तो वहा नही थे। उनके स्थान पर एक नन नग्न अवस्था मे सभोगरत थी। मजे की बात यह है कि नन यानि भिक्षुणिया वह कुमारी कन्यायें होती हैं जो आजीवन कुमारी रहकर ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करती हैं। इन्ही ननो मे स एक को, नग्न अवस्था मे मुशीराम ने पादरी के साथ देखा था। जो पादरी यानी फादर कहलाते है।

इस दुर्घटना से मुशीराम के मन मे पादरियो नना और ईसाई धम के प्रति सख्त नफरत हो गई। उनका ईसाई धर्म और पादरियो और नना के प्रति विश्वास समाप्त हो गया। अब तक वह यह समझते थ, पादरी जो अपना जबान से कहते हैं वसे सदकम भी करते हैं वसे ही शुद्ध आचरण व विचार होत हैं।

पर अब उन्ह महसूस हुआ कि सभी धर्मों मे मात्र धर्माधता माजूद है और व्यथ का झूठा आडम्बर है। कोई भी धम कोई भी समाज उतना शुद्ध और सात्विक नही है जितना वह दिखलाई पडता है या प्रचारित करता है।

इस दुर्घटना से ईसाई धम के प्रति बनी श्रद्धा और आकषण सदा-सदा के लिए छूट गया। इसाई धम ही नही हिन्दू धम के आडम्बरा से भी उन्ह सख्त नफरत हो गयी। किसी भी धम के प्रति मुशीराम के मन में कोई आस्था शेष नही रही और उनका मन नास्तिक विचार-धारा की ओर झुकन लगा। धम मुशीराम को मायाजाल के सिवाय कुछ नहीं लगता।

इस अन्तरद्वन्द्व के कारण मुशीराम का मन पूजा-पाठ से विमुख हो गया। उनके दैनिक जीवन मे मदिरो के दशन करने का नियम टूट गया। इसके विपरीत व्यायाम और शरीर सौष्ठव के प्रति उनका आकषण ज्यो का त्यो रहा।

सन 1875 के दौरान क्वींस कालेज मे उच्च शिक्षा मे अध्ययन करत समय मुशीराम का ध्यान रागात्मक प्रवृत्तियो की ओर हुआ।

अध्ययन के साथ कवितायें करने का शौक उठ लगा। प्रति रवि वार घर मे ही कवि सम्मेलन होने लगा। उनकी मित्र मण्डली जो गाढी कम्पनी के नाम से प्रसिद्ध हुई। आपकी वातचीत म भी साकेतिक शब्दो का व्यवहार करने लगी।

मुशीराम तब भी पढने लिखने मे कुशल थे। अच्छे अक लाकर पास हो जाते।

तभी उनके पिता का स्थानातरण मथुरा हो गया। सपरिवार नानक चद मथुरा पहुचे जहा मुशीराम भी उनके साथ थ।

मथुरा का तीन लोक से न्यारी नगरी कहा जाता है। यह भगवान श्रीकृष्ण की जन्मस्थली, लीलाभूमि है। महान तीर्थ है। बनारस की भाति यहा भी अनेक छदमवेशी घूम रहे थ जो धम की आड म अबोध जनता को बेवकूफ बना रहे थ।

पिता नानक चद ने मथुरा के चौबो को भोजन कराने का विचार किया। चौबो के पास जाने पर उन्होने कहा, "मन के दस को निमत्रित किया जाय या मन के चार।"

चौबो की इस बात का यह मतलब नही था कि मन की इच्छा नुसार दस चौबे बुलाए जायें या चार चौबे बुलाए जाए। उनका मतलब था। एक मन पक्के भोजन को करने वाले दस चौबे बुलाए जाए या चार।

मुशीराम के पिता नानक चद न चार चौबो को भोजन के लिए आमत्रित किया। जिनके नाम थे सोटा, मोटा, लोटा व लगोटा।

निमत्रण के साथ ही यह तय हो गया कि प्रत्येक के लिए छटाक छटाक भर भग का प्रबन्ध भी किया जायगा। सभी चौबे ठीक आठ बजे मुनह नाचते गाते आ पहुचे। आते ही उन्होन भग की फरमाइश की।

डेढ पाव के करीब भीगी हुई भग रखी हुई थी। चौबो न इस भाग को सिल पर खूब रगडा लगाकर पीसा। फिर उसमे बादाम और इलायची पीसकर डाली और खूब रगडा लगाकर इस भग को फिर पिसाई की। जिसे दूध और पानी मिलाकर फिर भंग का पेय पदार्थ तयार हुआ।

भगवान द्वारकाधीश को भग का प्रसाद लगाने के बाद प्रसाद स्वरूप मुशीराम, नानक चद को एक एक कटोरा भाग मिली।

भाग पीने के बाद चारो चौब ग्यारह बजे भोजन के लिए आसन पर आ बठे। पहले उनके पर पखारे गय।

इसके बाद चारो के सामन डेढ-डेढ सेर लच्छेदार मलाई परोसी गयी। फिर पके पकवान चौबो के सामने रखे गए। दो दो सेर पड उन पर भाजी, पकौडी आदि के साथ-साथ तीस तीस पूरियो की तह। फिर उतनी ही पूरियो की तह। फिर मलाई और फिर पूरियों की तह। फिर हलुआ और आखिरी मे भरपट मलाई।

चौबो को एक एक रुपया दक्षिणा भी दी गयी जिसे लेन के बाद चौबा ने फिर भाग की माग की।

इतन भोजन के बाद भाग की माग को देखकर मशीराम को लगा कही चौबो का पेट न फट जाए, ब्रह्महत्या का पाप न लग जाये।

सारा दिन मुशीराम इस उधेड़बुन म लगे रहे। शाम को मन न माना तो विश्रामघाट पर गय। उन्हें आश्चय हुआ मोटा, मोटा, लोटा, लगोटा जीवित ही नही बल्कि लगोट बाध अखाड मे कुश्ती लड रह थे।

चौबो का जीवित देखकर जहा उनक मन म सतोष हुआ। वही उनके मन मे इन भोजनभट्ट चौबा क प्रति तीव्र घृणा उत्पन्न हो गयी।

मात्र भोजन के लिए इतना आडम्बर और 25 30 सेर खाकर भी इस शरीर से किसी व्यक्ति या समाज की सवा हो सकती है ! सिफ जिह्वा के स्वा" के लिए इतना पाखड, उनका मन घृणा से भर गया।

मथुरा की ही दूसरी घटना गोलाइयो की लीला की है। दक्षिण के एक डिप्टी कलेक्टर अपनी पत्नी और बच्चा के साथ तीथ भूमि मथुरा की यात्रा पर आय। उनका लडका छ सात वष का था व लडकी चौदह-पद्रह साल की थी।

उनका परिचय मुशीराम से हो गया क्योंकि इससे पूव काशी भी वह मुशीराम के साथ काशी के मदिरा और घाटो के दशन

चुके थे।

एक दिन गोपाल मन्दिर मे झाकी लगी हुई थी। मुशीराम भी उस झाकी का दर्शन निकले। पाच बजे के आसपास का समय था।

मुशीराम के साथ एक हेड कास्टेबिल भी था। वह कास्टेबिल एक गुसाइ का परिचित था। उसने मुशीराम को मन्दिर के अन्दर का परकोटा व मन्दिर का भीतरी भाग दिखलाने की बात कही।

अन्दर जाकर वह मन्दिर का परकोटा देख रहे थे तब उन्हे एक चीख सुनाई दी। वे दोनो पास वाले कमरे का दरवाजा तोडकर अन्दर घुसे तो उन्हे एक लडकी एक गुसाइ से गुथी हुई दिखलाई पडी।

गुसाईं जी लडकी को जबरदस्ती अपने काबू मे कर रहे थे। उधर लडकी गुसाईं जी को धक्किया उक्कियाकर अपना पीछा छुडाना चाहती थी।

मुशीराम और कास्टेबिल को देखकर उस गुसाइ ने उक्त कन्या को छोड दिया और यह बहाना बनाने लगा कि वह लडकी भगवान कृष्ण की मूर्ति देखकर घबरा गयी थी। वह तो उसे समझा रहा था।

वह कुमारी लडकी कोई और नही उन्ही परिचित डिप्टी कलेक्टर की लडकी थी। उसने मुशीराम को बतलाया कि उस गुसाइ के साथ की एक अधेड स्त्री उसे कृष्ण भगवान के दर्शन कराने के नाम पर मदिर के भीतरी भाग मे लायी थी। उसे अन्दर कर वह अधेड स्त्री खुद बाहर भाग गई। गुसाइ जी अन्दर छिपे हुए थे जिन्होने उसके साथ बलात्कार की चेष्टा की थी। सयोग से मुशीराम पहुच गये वरना उस किशोरी कन्या का सतीत्व कौमार्य भग हो जाता।

मुशीराम उस कन्या को अपने साथ अपने घर ले गए जहा उन्होंने लडकी के पिता को पूरी घटना विस्तार से सुनाई।

मथुरा जैसी नगरी मे इस तरह की कुटनी स्त्रिया और पुजारियो के नाम पर लम्पटो को देखकर उन डिप्टी कलेक्टर महोदय को मथुरा से घृणा हो गयी।

उन्होने अपनी तीर्थ यात्रा वही समाप्त कर दी। उनका मन थोथली मूर्ति पूजा के आडम्बर से भर गया था। वह तुरन्त अपने पैतृक

स्थान दक्षिण भारत की ओर चले गए।

मुशीराम का मन तो इन लपट पुजारियो, पडा व गुसाइयो से वैसे भी खिन्न था।

मूतिपू-जा व्यर्थ का आडम्बर और धम के नाम पर हो रही लूट खसोट से वे किसी प्रकार भी स तुष्ट नही थे।

मथुरा म धम के नाम पर भाग और भोजनभट्ट पडो का उ माद और स्त्रियो द्वारा अबलाओ के साथ कुटनी पशा होता देखकर वह भी पिता से आना लेकर अपने घर तलवन चले गए।

यात्रा पर आये। अंग्रेजी शास~ के दिन लगभग सारे विश्व में ब्रिटिश साम्राज्य का सूरज चमक रहा था। इसलिए ब्रिटिश युवराज अपने साम्राज्य की शान देखन और दिखलान के लिए हिंदुस्तान आये थे। ताकि भारत म भी अग्रजा के प्रति राजभक्ति की भावना उदय हो जाये। इसलिए ब्रिटिश राजकुमार सारे भारत का दौरा कर रहे थे। उसम बनारस भी एक स्थान था।

बनारस म भी प्रिंस आफ वेल्स का स्वागत बडी ही धूमधाम से किया गया। बनारस के अलावा आस पास के नगरा और कस्बो से हजारो की सख्या म लोग प्रिंस ऑफ वे स के दशन करन आये थे। अंग्रेज सरकार ने जगह जगह युवराज का बडा ही जोरदार स्वागत किया।

बनारस क इस स्वागत समारोह म आस पास के राजा महाराजा भी सम्मिलित हुए। मु शीराम भी अपने विद्यार्थी साथियो के साथ इन स्वागत समारोहो मे आये। पर उन्हे इस बात से बडा दुख हुआ, जब उन्होने छोट छोट अंग्रेज अधिकारियो को राजा महाराजाओ को डाटत फटकारत हुए देखा था। इससे ज्यादा दुख का विषय यह था कि वह राजा महाराजा भी अपनी सभी मर्यादा को ताक पर रखकर सिर झुकाये उनकी डाट सुन रहे थ।

मुंशीराम के स्वाभिमानी हृदय का बहुत चोट पहुंचा। अंग्रेज शासको क क्रिया कलाप देखकर उन्हें यह महसूस होन लगा कि यह लाग शासक नही बल्कि शापक हैं। इनके साथ साथ उनको भारतीय राजाओ के स्वाभिमान और झूठे अभिमान रोब दाब से सख्त घृणा हो गयी।

उसी दिन से भारत को अंग्रेजो स मुक्त कराने का सकल्प उन्होन ले लिया। हर भारतवासी को स्वतन्त्रता का मूलमंत्र सिखलान का उसी दिन उन्होन कठोर व्रत ले लिया।

सन 1878 का साल मुशीराम के लिए हर प्रकार से महत्वपूर्ण था। पिता नानक चद साहबस उन्हे अपने पास बरेली रखना चाहते थे। मुंशीराम बनारस छोडकर इलाहाबाद मे आग की शिक्षा ग्रहण करन चले गये थ। जहा इलाहबाद के म्योर सेंट्रल कालेज म उन्होन प्रवेश ले लिया।

म्योर सेंट्रल कालेज म मनोविज्ञान म आनन्द लेन लगे। साथ ही साथ रसायनशास्त्र भी उनका प्रिय विषय था। ग्रीष्म कालान अव काश म भी मु शीराम का अध्ययन जारी रहा।

मुशीराम के दोनो बड भाई मूलराज और आत्माराम पुलिस विभाग म सब इ स्पक्टर थे। मूलराज हमीरपुर म और आत्माराम मिर्जापुर म थानेदार थे। मुशीराम छुट्टी के दिना म अपने दोनो भाइया क पास चले जाते थे। पढने मे मन लगाते थे। इस कठिन परिश्रम का नतीजा यह हुआ कि परीक्षा के दिनो म मुशीराम बहुत बीमार पड गय। तकशास्त्र के पर्चे के दिनो म वह बुखार से बुरी तरह बीमार पड गय।

रसायनशास्त्र के पर्चे के दिन तो वह कॉलिज तक पहुच ही नहीं सके। इस कारण मुशीराम परीक्षा म असफल सिद्ध हुए।

बाद म बहुत से घरलू कारणो से कुछ पिता के प्रेमवश मु शीराम की पढाई बन्द हो गयी। पिता नानक चन्द उन दिना बरेली क शहर कोतवाल थे।

अभी तक मु शीराम को अपन व्यक्तिगत जीवन म जो अनुभव हुए थे उनसे उनके धार्मिक विश्वास व आस्था को बहुत गहरा आघात लगा था।

तभी प्रयाग म घटी एक घटना ने उनकी धार्मिक भावनाओं को सही दिशा दी।

मु शीराम उस समय तक पूरी तरह नास्तिक हो गये थे। उन्ह हिन्दू धम म फली अनेक धार्मिक कुरीतियो के प्रति घोर अश्रद्धा हो गई थी।

धम के सम्बन्ध अनेक बातें वे सुना करते थे। पर मु शीराम जब तक अनुभव न कर लेते तब तक विश्वास नही करते थ। इस तरह के चमत्कारो को वह कोरी कल्पना या गप्प समझते थे।

मुशीराम की उस समय योगाभ्यास पर अगाध श्रद्धा थी। वह स्वय नियम पूवक यौगिक क्रियाओ का नियमित अभ्यास करते थे।

स्वय व्यायाम के साथ दढ धार्मिक प्रक्रियाओं का पालन करते थ।

बरेली स इलाहाबाद जान पर मुशीराम ने कुछ अधिक योगाभ्यास किया। किन्तु कुपथ्य के कारण वह बहुत बीमार पड गये थे। इसी

अवस्थ्य में पूण स्वास्थ लाभ करने की इच्छा के कारण मुशीराम की यह इच्छा हुई कि उन्हें किसी महान योगी के दशन हो जायें। ताकि उनका आगे का जीवन सफल सिद्ध हो जाये। मुन्शीराम ने इस सम्ब ध म अपन आस-पास किसी महान योगी की खोज की। जब मुशीराम स्वय इस काय म सफल सिद्ध नही हुए तो उन्होन अपन मित्रो से इस सम्बन्ध मे जिक्र किया।

मुशीराम को पता चला कि गगा के किनारे झूसी के समीप एक घन जगल म एक ऐसे महात्मा रहते हैं, जिनके वश मे एक शेर है।

मुशीराम को पता चला कि महात्मा दिन म अदृश्य रहत ह केवल रात को ही उनके दशन किये जा सकते ह।

हम सबने इलाहाबाद म त्रिवेणी के पार झूसी का इलाका दखा है जो आज महानगरीय चमक दमक से ओत प्रोत एक साधारण कस्बा ह। आज से सौ साल से पूव इलाहाबाद नगर भी इतना फला हुआ नही था। इलाहाबाद नगर के आगे, झूसी का इलाका भी तब घनघोर जगल से भरा हुआ था। रात मे वहा जाने की बात तो बहुत दूर थी।

फिर भी मुन्शीराम अपने एक मित्र बुद्ध सेन तिवारी के साथ शाम के समय त्रिवेणी पार कर जगल की राह ली। दोना ही मित्रा न रात्रि का भोजन पहले ही कर लिया था।

दोनो ही मित्र शाम से रात तक इधर उधर घूमते रह। सुनसान बियावान जगल मे उस समय चारा ओर सन्नाटा छाया हुआ था। डर के मारे कोई अच्छा भला आदमी उस जगल मे कदम नही रख सकता था।

पर मुन्शीराम और बुद्ध सेन महात्मा और शेर दोना के ही दशना का दढ निश्चय कर आये थ।

निरथक इधर उधर घूमते रहन क पश्चात करीब रात दस बजे वह दोनो व्यक्ति उस महात्मा के निवास स्थान पर जा पहुचे। मुशी-राम और बुद्ध सेन एक स्थान पर छिपकर बठ गये।

उन्होन वहा महात्मा को केवल लगोटी पहन समाधि लगाये बठे देखा। दोनो व्यक्ति रात भर इसी तरह छिप रह। रात भर न जाने

महात्मा की समाधि टूटी और न ही इन दोनो को ही नीद आई या पलक तक झपकी ही।

तीन बजे के आस पास शेर की गर्जना हुई। दोनो ही यानि मुशी राम और बुद्ध सेन चौक्कर सतर्क होकर बैठ गये। शेर की गर्जना की आवाज जिस दिशा से आई थी, उसी ओर देखने लगे।

शेर चलता हुआ सीधा महात्मा के पास आया। महात्मा के पैरो के पास जाकर पैर चाटने लगा।

शेर के आगमन के साथ ही महात्मा की समाधि भंग हुई। कुछ देर तक वह स्नेह से शेर का सिर थपथपाते रहे। फिर शेर को जाने को कहा।

शेर को ऐसा लगा जैसे महात्मा की आज्ञा सुनी। अपना सिर महात्मा के चरणो मे रखा। और धीरे धीरे जंगल की राह चला गया।

मुंशीराम और बुद्ध सेन यह देखकर बहुत प्रभावित हुए। उन दोनो ने उठकर महात्मा के पैरो मे अपना सिर रख लिया। जब उन दोनो ने महात्मा से उस शेर के सम्बन्ध मे पूछा तो उन्होने बतलाया कि यह कोई चमत्कार नही था। इस शेर को किसी शिकारी ने गोली मार दी थी। यह घायल अवस्था मे तड़फ रहा था। मैंने इस शेर को दर्द से तड़फता देखा तो जंगल मे जो औषधि थी उससे शेर के घाव का उपचार किया। शेर बहुत प्यासा था। मैंने उसको जंगल से लाकर पानी पिलाया।

शेर को जब तक दर्द से छुटकारा नही मिला था यह कृतज्ञता से मेरे पैर चाट रहा था। जब तक शेर का घाव भर नही गया। मैं रोज इसको जंगल की औषधियां लगाता रहा। अब जब यह पूर्ण रूप से स्वस्थ भी हो गया है। कृतज्ञता की अपनी आदत नही भूला है। रोजाना महात्मा की समाधि के पास अपने आप चला आता है। यह कोई चमत्कार नही है। बल्कि सेवा उपासना, परोपकार व अहिंसा का फल है जो कभी व्यर्थ नहीं जाता है।

प्रत्यक्षत मुंशीराम शेर को इस तरह महात्मा से हिलामिला देख कर बहुत प्रभावित हुए थे। उन्हे सच्चे दिल से योगी के प्रति श्रद्धा हो

गई थी। पर महात्मा न उनके विचारा को धूल-धूसरित कर दिया। महात्मा न उनको हठयोग छाडकर सबसे सहयोग और सेवा का व्रत लेने की सलाह दी।

महात्मा से उन्हें यह शिक्षा मिली कि सच्चे दिल से किसी के साथ उपकार करने स बडा सत्कम कोई नही ह। जीव सेवा ही मानवता का सच्चा धम ह। दीन दुखिया, निबल और असहाय प्राणियो की सेवा ही सच्चा धम ह। जिसका मनुष्य का प्रतिफल अवश्य मिलता है।

मुन्शीराम को इस प्रेरणा न ही आग चलकर महात्मा मुन्शीराम और स्वामी श्रद्धानन्द बनने की प्रेरणा दी, जिसके फलस्वरूप उन्होंने अछूतोद्धार समाज सेवा, परोपकार के लिए अपना जीवन लगाया।

पर यह सब तो बहुत बाद म हुआ। इतना अच्छा बनना उतना आसान नही ह जितना समझा जाता है।

मनुष्य में दुर्व्यसन, लोभ, पाप, मद बडा हो जल्दी आता है। मुन्शीराम भी इन प्रलोभनो स बच नही सक क्योकि वह सहज रूप म एक मनुष्य ही तो थ।

अपनी परीक्षाओ मे बीमारियो के कारण वह अनुत्तीण हो गय। छुट्टियो म वह अपन पिता के पास बरली चल गय जहा उनके पिता नानक चन्द कातवाल थ।

उनका साथ ऐस युवको स हो गया जो रोज शराब पान के आदी थे। मुन्शीराम भी उन युवको क साथ शराब पान लग। कभी-कभी जुए के फड पर बठन लग।

शरीर इन दुर्व्यसनो स गिरन लगा। अनक रोगो न उन्हें घेर लिया। लम्बा चौडा हृष्ट पुष्ट शरीर सूखकर काटा हो गया। अत उन्ही के एक मित्र जुयबाज लल्ला हकीम क पास जान पर कुछ औषधिया और कुछ सयमित जीवन स उनका स्वास्थ्य कुछ सुधरा।

अब पढाई लिखाई उन्होंने बिलकुल छोड दिया। पिता क पास ही बरली म रहन लग।

8 स्वामी दयानन्द से भेंट

जिस समय मु शीराम बरेली पहुचे, वह पूरी तरह नास्तिक हो चुके थे। उस समय यूरोप म अनक नास्तिक मत को मानन वाले थ, जिन्होन नास्तिकता पर अनेक ग्रथो की रचना की है।

मुशीराम न नास्तिकतावाद पर उपलब्ध इन पुस्तको को बहुत अच्छी तरह अध्ययन किया था। इन पुस्तको के पारायण से वह पूरी तरह देवी देवताओ पर अविश्वास करते थे।

पिता नानक चन्द पर पुत्र की इस मनोस्थिति का बुरा प्रभाव पडा। वह मुन्शीराम की इस अवस्था से अत्यधिक चिंतित रहने लगे। उन्हें महसूस हो रहा था कि उनका पुत्र मु शीराम कही भटक गया है। वह मु शीराम को इस भटकाव स अलग निकालने का कोई रास्ता ढूढ रहे थे।

अचानक ही उन्हें महर्षि दयानन्द के बरेली आगमन की खबर लगी। उनकी प्रसन्नता का पारावार न रहा। मु शीराम को शायद कोई दिशा मिल जाय यही सोचकर नानक चन्द काफी प्रसन्नता और सतोष अनुभव कर रहे थे।

महर्षि दयानन्द सरस्वती वैदिक धर्म के प्रचार के लिए बरेली आ रहे थ। नानक चन्द को शहर कोतवाल होने के कारण कानून व व्यवस्था की सारी स्थिति सम्हालनी थी।

14 श्रावण मास सम्वत 1936 अर्थात अगस्त सन 1879 ई० को महर्षि दयानन्द सरस्वती का बरेली म पदार्पण हुआ। बरेली के विभिन्न स्थानो पर महर्षि दयानन्द के व्याख्यान हुए। अग्रेज सरकार यह नही चाहती थी कि किसी कारणवश स्वामी दयानन्द की सभा म किसी प्रकार का झगडा या दगा फसाद उठ खडा हो।

इस कारण नानक चन्द स्वय और उनके वरिष्ठ सहयोगी स्वामी दयानन्द की हर सभा मे खुद मौजूद होते ।

महर्षि दयानन्द के भाषण सुनकर नानक चन्द स्वय इतन ज्यादा प्रभावित हुए कि उन्होन मुशीराम को भी स्वामी दयानन्द के व्याख्यान म ले जान का निश्चय किया । उन्हें पूरा विश्वास था कि उनका पुत्र मुशीराम ऋषि दयान द की ओजस्वी वाणी सुनकर अवश्य आस्तिक हो जायेगा । इसी आशा और विश्वास से उन्होने मुशीराम को महर्षि दयानन्द सरस्वती का व्याख्यान सुनने की आज्ञा दी ।

मुशीराम बनारस के महात्माओ वेदपाठियो, उपदेशको, मथुरा के पडो और गुसाइयो के कुकृत्यो को अभी तक नही भूले थे ।

उनके मन म कुछ इस प्रकार की धारणा बन गई । सस्कृत क य तथाकथित पडित पाखडी और ढोगी होते है । इसलिए उनकी इच्छा स्वामी दयानन्द सरस्वती का व्याख्यान सुनन की कदापि नही थी ।

मुशीराम यह सोच रह थे कि यह महर्षि भी अ य लपट साधुओ की भाति ही लपट होगा ।

परन्तु पिता की आज्ञा टालना उनके कर्तव्यो की श्रेणी म नही आता था । इसलिए वह अपन पिता नानक चन्द के साथ बेगम बाग कोठी जा पहुचे, जहा महर्षि दयान द सरस्वती उन दिनो निवास कर रह थे ।

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती के दशन मात्र से ही मुशीराम बहुत ज्यादा प्रभावित हुए । मुशीराम के मन म स्वामी दयान द के दशन से अगाध श्रद्धा और भक्ति भाव जागन लगा ।

स्वामी जी नियम, सयम, त्याग, तपस्या की साक्षात मूर्ति थे । स्वामी दयानन्द के इस रूप को देखकर मुशीराम को ऋषि जीवन की स्पष्ट छवि दिखलाई पडी ।

मुशीराम सकुचाय, से बठे रहे । उन्होने आस-पासजब दृष्टि डाली तो चकित रह गय । टी० जे० स्काट नामक प्रख्यात पादरी, अनक उच्च कोटि के अग्रेज विद्वान और उच्च पदस्थ राज अधिकारी गण, स्वामी दयानन्द का व्याख्यान सुनने के लिए उपस्थित थे और

आतुर मात्र से स्वामी दयानन्द के अमृत रूपी व्याख्यान सुनने को लालायित थे।

इनने वरिष्ठ अधिकारी विद्वानों को महर्षि दयानन्द का भाषण सम्मान पूर्वक सुनने को आया देखकर मुन्शीराम और अधिक प्रभावित हुए। उस दिन महर्षि का प्रवचन 'ओउम' पर था। ज्यों ही स्वामी दयानन्द ने ओउम शब्द का उच्चारण किया मुन्शीराम के हृदय-तन्त्र के तार झनझना उठे। उन्होंने उस अमर वाणी को सुना तो तन्मय हो गये। आस्तिक आह्लाद का आनन्द सीधा उनके मन मस्तिष्क में समाने लगा।

स्वामी श्रद्धानन्द ने अपनी आत्म कथा में यह स्वीकार किया है कि वह पहले दिन का आस्तिक आह्लाद था, नास्तिक रहते हुए भी आह्लाद से विनम्र कर देना ऋषि आत्मा का ही काम है।'

अभी तक मुन्शीराम के अनुभवों में स्वार्थी मन्दिर कर्मचारियों, ने चरित्रहीन गुसाइयों, भोजन भट्ट चौबों और अनाचारियों, पादरियों उनके हृदय को इतनी चोट पहुंचायी थी जिसके कारण वह निराश होकर नास्तिक बन गये थे। निराश मुन्शीराम के हृदय में ऋषि दयानन्द के प्रवचनों ने फिर से धार्मिक भावना का पवित्र स्रोत प्रवाहित कर दिया।

सभा स्थल पर ही दंडी स्वामी को सूचित किया गया कि आपके लिए व्याख्यान के लिए टाउन हाल मिल गया है। दूसरे दिन से ऋषि के लिए प्रवचन टाउन हाल में होने लगे।

टाउन हाल में जब तक महर्षि दयानन्द के व्याख्यान धार्मिक परिभाषाओं पर होते रहे तब तक कोतवाल नानक चन्द बराबर महर्षि दयानन्द के प्रवचनों को सुनते रहे। किन्तु जब उन्होंने अपने प्रवचनों में मूर्ति-पूजा के विरोध में कहना शुरू किया तो नानक चन्द को यह अच्छा नहीं लगा। उसके बाद से उन्होंने अपने स्थान पर एक अन्य सब इंस्पेक्टर को व्यवस्था के लिए भेजना प्रारम्भ कर दिया।

जहां एक ओर पिता को ऋषि दयानन्द के ईश्वर के अवतार मूर्ति पूजा-खंडन के विचार अच्छे नहीं लगे, वहां पुत्र मुन्शीराम का उनमें

अपार आनन्द आने लगा व उनके मन में अपार शांति मिलने लगी।

मुंशीराम का यह नियम बन गया था कि दिन का भोजन करके दोपहर को ही व्याख्यान स्थल पर पहुंच जाते थे। सभा में प्रश्नोत्तर होते रहते, व उसका आनन्द लेते रहते।

25, 26 और 27 अगस्त सन् 1879 ई० को महर्षि दयानन्द के साथ पादरी स्काट के तीन शास्त्रार्थ सपन्न हुए।

पहले दिन का विषय था, पुनर्जन्म, ईश्वरावतार और तीसरे दिन "मनुष्य के पाप बिना फल भुगते क्षमा किए जाते हैं या नहीं।"

मुंशीराम पहले दो दिनों में सभा स्थल पर उपस्थित थे। किन्तु तीसरे दिन वे नहीं जा सके कारण 27 अगस्त को उन्हें सन्निपात हो गया था और फिर उस समय वे आचार्य दयानन्द के दर्शन कर सके थे। ऋषि दयानन्द की अपार तर्क शक्ति, ज्ञान भण्डार और निर्भीकता को देखकर मुंशीराम पर अत्यधिक प्रभाव पड़ा था।

स्वामी श्रद्धानन्द ने अपनी आत्मकथा में इस विषय में कई संस्मरण लिखे हैं जो उनकी नजरों के सामने घूमते रहते थे।

मुंशीराम ऋषि दयानन्द से अत्यधिक प्रभावित हो गये थे फिर भी वे उनके विषय में सब कुछ जान लेना चाहते थे। जिससे उनके मन में महर्षि दयानन्द को लेकर कोई शंका शेष नहीं रहे।

मुंशीराम को ज्ञात हुआ कि स्वामी दयानन्द सुबह मुंह अंधेरे शौचादि से निवृत्त होकर अपना लट्ठ लेकर सुबह ठीक साढ़े तीन बजे कहीं चले जाते हैं।

मुंशीराम ने निश्चित किया कि उनका पीछा करके देखना चाहिए कि वह कहां जाते हैं और क्या करते हैं।

इस कार्य के लिए मुंशीराम ने अपने साथ केसरी अखबार के संपादक को भी साथ ले गये।

रात को ठीक साढ़े तीन बजे महर्षि दयानन्द अपने घर से निकले, मुंशीराम और उनके मित्र ने उनका पीछा करना शुरू कर दिया। महर्षि दयानन्द कुछ दूर तक तो धीमे धीमे चलते रहे, फिर उन्होंने अपनी चाल तेज कर दी। मुंशीराम और उनके मित्र स्वामी जी का

पीछा नही कर पाय ।

कुछ आग चलकर एक चौराह था, जहा स तीन माग अय तीनो दिशाओ की ओर जात थे। स्वामी जी वही स आखो स ओझल हो गय और मु शीराम जान भी न सके कि ऋषि किधर चले गय। अत हताश व उस दिन लौट आय ।

कि तु दूसर दिन मु शीराम, सम्पादक महोदय क साथ पहले ही उस चौराहे पर छिपकर बठ गय जहा से ऋषि दयान द एक दिन पूव गायब हो गय थे।

कुछ ही दर बाद ऋषि दयान द की विशालकाय आकृति सामने से आती दिखलाई दी। व ज्यो ही आगे निकले कि दोनो जनो न महर्षि दयान द का पीछा करना शुरू कर दिया ।

स्वामी दयान द बहुत तेजी से चल रहे थ और मु शीराम व सपादक जी हाफत कापत उनका पीछा कर रहे थे। कुछ दूर तक इसी तरह चलत रहन के बाद स्वामी दयान द की चाल कुछ धीमी हुई फिर स्वामी दयान द धीम धीम चलते हुए एक पीपल के पड के नीचे बठ गय। बठते ही समाधिस्थ हो गये। मु शीराम न घडी मे समय दखा और समाधि टूटन की प्रतीक्षा करन लगे। प्राणायाम करत वे दिख नही बल्कि सीधे आसन लगात ही समाधि लग गयी।

ठीक डेढ घण्टे बाद स्वामी जी की समाधि टूटी। समाधि स उठ कर उ होन एक-दो अगडाइया ली और टहलते हुए पुन अपने आश्रम की ओर लौट गय।

मु शीराम भी अपन सपादक मित्र के साथ वापिस लौट गय। उनके मन मे ऋषि दयानद के प्रति जो शकाए थी उनका समाधान हो गया था। महर्षि दयानद के ब्रह्मचय और तेजस्वी शरीर क रहस्य, समाधि स वे परिचित हो गय थे।

महर्षि दयानद उस समय बरेली म खजाची श्री लक्ष्मी नारायण के यहा ठहरे हुए थे। लक्ष्मी नारायण उस समय पाच सरकारी खजानो क अधिष्ठाता थे। और उस समय करोडपति समझे जात थे।

एक प्रवचन के दौरान ऋषि दयानद पौराणिक तथा आचार भ्रष्ट

कहानियां का खंडन कर रहे थे। उस समय उस सभा मे पादरी स्काट, बरेली कमिश्नरी के अंग्रेज कमिश्नर मिस्टर एडवर्डस कलेक्टर मिस्टर रीड, पन्द्रह बीस अंग्रेज अधिकारी, व अनेक भारतीय उच्चाधिकारी मौजूद थे।

महर्षि दयानन्द ने पहले हिन्दू धर्म मे फैली अनेक उन पौराणिक कथाओ का खंडन किया, जिनमे अनेक असामाजिक व असगत बातें थी। जस वहु विवाह आदि। फिर इसके बाद वे ईसाई धम की बुराइयो की ओर आम व उनकी भी अशुद्धता का बहुत विस्तार से वर्णन किया।

ईसाइ धम की इतनी खुली आलोचना सुनकर, अंग्रेज कमिश्नर और कलेक्टर क्रोधित हो गए। उस समय सार्वजनिक रूप से तो वह कुछ नही कर पर सभा की समाप्ति के बाद उन्होने खचाची लक्ष्मी नारायण जी को अपने बंगले पर बुलाया और उन्हें ऋषि दयानन्द तक यह सदेश पहुचा देने के लिए कहा कि वह ईसाई धम या अन्य धर्मों की इतनी खुली आलोचना न करे, जिससे किसी भी व्यक्ति की धार्मिक भावनाओ को ठेस लगे। लक्ष्मी नारायण ने साहब से उनका सदेश ऋषि तक पहुचा देने का वचन दिया और कोठी से बाहर निकले।

रास्ते भर वह इसी उधेड बुन मे रहे कि किस प्रकार महर्षि को कमिश्नर साहब का सदेश सुनाया जाय। यदि नही कहते ह तो साहब नाराज होते हैं और कहते हैं तो कही स्वामी जी क्रोधित न हो जायें। पहले तो वह यही सोचते रहे कि यदि कोई अन्य व्यक्ति उक्त सदेश को पहुचा दे। पर कोई भी व्यक्ति इस काय को करने को तयार नही हुआ। किसी तरह मुशीराम लक्ष्मी नारायण के इस दुष्कर कार्य के लिए तयार हो गये।

पर मुशीराम भी दयानन्द के तेज के सामने टिकन सके। उन्होने केवल यही कहा कि लक्ष्मी नारायण कुछ कहना चाहते थे। ऋषि दयानद ने तुरन्त लक्ष्मी नारायण जी को बुलाया जो अत्यन्त लज्जा और आतरिक भय के साथ अटक-अटक कर किसी तरह अपनी बात कह पाये।

ऋषि दयानद सारी बात सुनकर मुस्करा कर बाले, 'इतनी-सी बात के लिए इतना गिडगिडाने की क्या जरूरत है। जो बात उन दोनो अग्रेज अफसरो ने कही, वह सीधी बात कहते, तो तुम्हारा और मेरा दोनो का समय कम नष्ट होता।'

इस बात मे महर्षि दयानद कुछ गभीर तो अवश्य हुए पर भयभीत होना उनके स्वभाव के विपरीत था। उसी नाम उन्होने बहुत ही महत्त्वपूर्ण ओजस्वी और सारगर्भित भाषण दिया। उस दिन उन्होने आत्मा के स्वरूप पर भाषण दिया। उस दिन भी सभी अग्रेज अफसर उपस्थित थे।

स्वामी दयानन्द ने उस दिन भगवतगीता का श्लोक सुनाते हुए भगवान श्री कृष्ण का आत्मा के सम्बन्ध मे दिया आख्यान दोहराया, "आत्मा तो अमर है इसे न कोई शस्त्र भेद सकता है न आग जला सकती है न इसे पानी ही गला सकता है, न इसे हवा ही सुखा सकती है। अर्थात शरीर नश्वर है आत्मा अजर और अमर है। शरीर तो चलायमान है आज है कल नही होगा।"

उस सभा मे उपस्थित अग्रेज अधिकारियो को सबोधित करते हुए ऋषि दयानन्द ने कहा, 'यह शरीर तो अनित्य है, इसकी रक्षा मे प्रवृत्त होकर अधर्म करना व्यर्थ है। मुझे तो कोई ऐसा शूरवीर नजर नही आता जो मेरी आत्मा का नाश कर दे। इसलिए मैं आत्मा की आवाज सत्य को कभी नही छुपाता हू और न करूगा।'

स्वामी दयानद के इस भाषण के दौरान सारे सभा स्थल मे सन्नाटा छा गया। सब स्तब्ध भाव से ऋषि दयानद का सारगर्भित भाषण सुन रहे थे।

व्याख्या समाप्त होते होते स्वामी जी ने इधर उधर देखकर पूछा, 'आज हमारे भक्त पादरी स्काट दिखलायी नही पड रहे हैं।'

सभा मे किसी व्यक्ति ने खडे होकर बतलाया कि यही पास के गिरजे मे आज उनका व्याख्यान है।

पादरी स्काट कभी भी ऋषि दयानन्द के व्याख्यानो से अनुपस्थित नही रहते थे। इसलिए स्वामी जी को पादरी स्काट से बहुत स्नेह हो

गया था। समीप के गिरजे मे ही उनके व्याख्यान की बात सुनकर स्वामी जी सभा से उठ खडे हुए और अपने अनुचरो से बोले, "चलो, आज मक्त स्काट का गिरजा देख आयें।"

महर्षि दयानद के पीछे पीछे सारी भीड समीप के गिरजे मे जा पहुचा।

स्वामी दयानद को गिरजे म आया देखकर पादरी स्काट गदगद हो गया। प्रार्थना स्थल के ऊचे भाग से नीचे उतर कर स्काट ने महर्षि का अभिनदन किया। उन्हे अपने समीप ऊचे स्थान पर बिठलाया। इसके बाद उन्होने महर्षि स कुछ उपदेश देन को कहा। महर्षि दयानन्द ने उस समय वहा व्यक्ति पूजा या देव पूजा का जोरदार शब्दो मे खडन करते हुए निराकार ईश्वर की उपासना व परोपकार का उपदेश दिया।

इन दिनो क सतसग से ही मुशीराम स्वामी दयानन्द के अत्यत निकट आ गये। फिर भी उनके नास्तिक विचार उनके मन मे उपादेय की स्थिति बनाय रहे। मुशीराम नास्तिक होने हुए भी ईश्वर के अस्तित्व पर अविश्वास नही कर पा रहे थे।

महर्षि दयानन्द न उन्हें आकर्षित तो अवश्य किया था किंतु उन्हें ईश्वर के अस्तित्व म अब भी सदेह बना रहा। यही नही, उन्हे ईश्वर और वेद दोनो ही आडम्बर से भरे हुए लगे। एक दिन उन्होने महर्षि दयानन्द से इस विषय मे अनेक प्रश्न पूछ डाले। पाच मिनट के ही प्रश्नोत्तर से मुशाराम निरुत्तर हो गये किंतु उनकी शका अब भी बनी रही।

दूसरी बार भी उन्होने महर्षि दयानद से शका समाधान के लिए अनेक प्रश्न किये किंतु इस बार भी उन्हें महर्षि के तर्कों के सामने चुप हो जाना पडा।

इसके बाद तीसरी बार भी यही घटना दोहराई गई। प्रश्नोत्तर हुए और मुशीराम निरुत्तर रह गए। पर उनकी शकाओ का समाधान अब भी नही हुआ।

मुशीराम स रहा नही गया उन्होने महात्मा दयानद से कहा,

महाराज यद्यपि अब भी तक शक्ति बड़ी प्रबल है, आपने मुझे चुप तो करा दिया है। परन्तु अब तक यह विश्वास नहीं दिलवाया है कि परमेश्वर का कोई अस्तित्व है।"

महर्षि दयानंद हंस और इसके बाद उपनिषद से एक श्लोक सुनाया और कहा, "देखो तुमने मुझसे प्रश्न किए और मैंने उनका उत्तर दिया, यह तो युक्ति की बात थी। पर मैंने यह प्रतिज्ञा कब की थी कि मैं तुम्हारा ध्यान परमेश्वर की ओर लगा दूंगा। तुम्हारा परमेश्वर पर विश्वास उस समय ही कायम होगा। जब वह प्रभु स्वयं ही तुम्हें अपना विश्वासी बना लेंगे।"

मुंशीराम दयानंद की युक्ति सुनकर चुप रह गये। वह बहुत अभिभूत हो गए। उन्होंने मन ही मन उस महान तेजस्वी अभिनेता स्वामी दयानंद को हाथ जोड़कर प्रणाम किया। उस समय से ही वह स्वामी दयानंद के साथ एक ऐसी डोर से बंध गए जिससे वह आजीवन जुड़े रहे। उसी श्रद्धा और विश्वास के बल पर वह आगे चल मुंशीराम से स्वामी श्रद्धानंद कहलाये।

27 अगस्त 1879 ई० को मुंशीराम सन्निपात ज्वर से पीड़ित हो गये। वे अभी स्वस्थ भी नहीं हो पाये थे कि स्वामी दयानंद बरेली से प्रस्थान कर गये थे।

9 गृहस्थ-जीवन

मुशीराम की तबियत दिन प्रति दिन बिगडती ही गयी ! पिता नानक चद न बरेली शहर म उपलब्ध सभी वद्य हकीमो को बुलाया पर मुशीराम की दशा मे कोई सुधार नही हुआ।

बरेली के तत्कालीन अग्रेज सिविल सजन का भी नानक चद न मुशीराम के इलाज के लिए बुलाया ! पर पूरे छ घटे तक अपनी सभी चिकित्सा विद्या का उपयोग कर भी वह मुशीराम को स्वस्थ नही कर पाया। इसके बावजूद अपनी डेढ सौ रुपये की फीस लेकर चला गया।

तब किसी न नानक चद को मुशीराम के इलाज के लिए लल्ला हकीम का बुलान की सलाह दी, लल्ला हकीम नम्बर एक का जुआरी आवारागद इसान था। इसलिए मुशीराम के इलाज के लिए नानकचद उसे बुलाने को तयार नही थे। इसस पूव भी मुशीराम का ज्वर लल्ला हकीम की दवाओ स ही ठीक हुआ था।

मजबूर होकर नानक चद को लल्ला हकीम की शरण लेनी पडी। उन्हाने लल्ला हकीम का मुशीराम के इलाज के लिए तत्काल बुलवाया। लल्ला हकीम न एक कटोरी म मिश्री घोली और तीन मासे की एक लाल दवा की पुडिया मिलाकर पूरा एक गिलास बनाकर पिला दिया।

फिर लल्ला हकीम न मुशीराम की नाभि म एक रोगन मला व उनके हाथो और परो म मक्खन लगाकर कासे के कटोरे से मालिश की फिर तीन तीन घटे बाद एक हरी दवा की पुडिया को मिलाकर शबत पिलाया ! बारह घटे म मुशीराम का बुखार उतर गया और उन्हें खूब गहरी नीद आ गयी।

उसके बाद जरा सा स्वस्थ होते ही मुशीराम न स्वामी दयानद के दशनो की अभिलाषा जाहिर की। किन्तु जब उन्हें यह बतलाया

कि स्वामी जी तो इस समय शाहजहापुर की यात्रा पर चल गए हैं तो मुशीराम अपना मन मारकर रह गये।

लल्ला हकीम ने पहले की तरह मुशीराम को इस बार भी आयुर्वियुक्त चटनी खाने को दी। तीसरे ही दिन मुशीराम पहले से कुछ स्वस्थ हो गए। सुबह उठकर काफी दूर तक टहलने चले गए। अब वह पूरी तरह स्वस्थ थे।

मुशीराम के पिता नानक चद को उन घटनाओ के बारे मे जरा भी पता नही था। जिनके कारण मुशीराम का मन नाच और राग रग की महफिल से बिलकुल उखड गया। जिनके कारण मुशीराम ने शराब पीना बिलकुल ही छोड दिया था।

पिता नानक चद को पूरा विश्वास था कि पुत्र मुशीराम की ये मनी खराब आदतें स्वामी दयानद सरस्वती के प्रभाव से ही छूटी हैं। वह स्वामी दयानद के बहुत कृतज्ञ थे जो उन्होने मुशीराम की बुरी आदतें छुड़ा दी थी। इसके बावजूद वह स्वामी दयानद सरस्वती द्वारा मूर्ति पूजा की बुराइया करने के कारण सख्त नाराज थे—या तो नानक चद ने स्वामी दयानद सरस्वती की हर प्रकार से अभ्यर्थना की थी।

नानकचद ने मुशीराम को स्वस्थ देखकर यह आज्ञा दी कि वह तुरन्त जाकर अपनी पत्नी शिवदेवी को मायके से अपने घर ले आये। मुशीराम पिता की आज्ञा से अपनी ससुराल रवाना हो गये। जहा अपने साले लाला देवराज से उनकी बहुत गाढी मित्रता थी। कालातर मे यही मित्रता आर्य समाज के उदभव विकास मे बहुत काम आई।

या तो मुशीराम का विवाह हुए काफी समय हो गया था। फिर भी उस समय की प्रथा के अनुसार उनकी पत्नी उस समय मायके मे ही रह रही थी।

इससे पूर्व मुशीराम दो बार अपनी ससुराल जा चुके थे। अब उनकी माता का निधन हो गया था। सब भाई अपनी अपनी पत्नियो और घर गृहस्थी मे रम हुए थे। सिर्फ मुशीराम और उनके पिता स्त्रीविहीन घर मे अपना समय गुजार रहे थे।

अपनी पत्नी शिवदेवी को लेकर मुशीराम बरेली अपने घर आ

गये। वरेली आन से पूव कुछ समय वह अपन घर तलवन भी रुके थे। जहा उन्हे अपनी पत्नी शिवदवी के साथ काफी खुलकर या कहना चाहिए खुलकर वातचीत की। मुशीराम ने पुरानी परिपाटी को छोडकर अपनी पत्नी से व्यावहारिक व यथार्थवादी सम्ब ध वनाए। अभी तक उनके मन मे अपनी पत्नी को लेकर जो कौतूहल था, वह समाप्त हो गया था। उनके मन म पति पत्नी के गूढ सवधो का नान भी हुआ।

इन शारीरिक और मानसिक सम्बन्धो क कारण ही अपनी पत्नी के प्रति मुशीराम के मन मे प्रेम की और समपण की भावना उत्प न हुइ। उन्होन यह महसूस कर लिया कि अब उनके ऊपर अपनी पत्नी शिवदेवी का उत्तरदायित्व है। जिसे हर हाल मे उ हे सारे जीवन भर निवाहना ही है।

उसी समय से ही मुशीराम के मन मे नारी की विवशता उसकी असहाय स्थिति को समझने की वात आई। सचमुच नारी अवला है आर सुरक्षा सम्मानित जीवन और सफल दाम्पत्य जीवन के लिए पूरा तरह पति पर ही आश्रित है। मुशीराम के मन म नारी के प्रति पूरी तरह दया और रक्षा की भावना उदय हो गई जा जीवन प्रयत कायम हो गइ। यही नारी रक्षा और नारी क प्रति दया की भावना आय समाज मे भी उत्पन्न हुई जो आज भी कायम है। आय समाज न जान कितनी अवला, उत्पीडित नारियो, वाल विधवाओ का कल्याण किया है। इन सारी भूमिका के पीछे निश्चित रूप से मु शीराम जसे व्यक्तियो के सिद्वात थे।

वरेली आन पर मशीराम की पत्नी शिवदेवी का यह नियम था कि दिन का भोजन तो हरहाल मे वह पति मुशीराम और ससुर नानक चद के भोजन करने के उपरात ही करती थी।

आय सस्कृति और आय सभ्यता मे पली पुषी शिवदेवी पूरी तरह कतव्यनिष्ठ और पति परायण स्त्री था। एक पति-परायण स्त्री के क्या कतव्य होने चाहिए, यह वह बहुत अच्छी तरह स जानती थी।

पति की सेवा के अतिरिक्त घर के काम-काज, ससुर व पूरे कुटुम्ब

की निष्ठापूर्वक सेवा करती। यह बहुत अच्छी तरह से जानती थी। एक साधन-सम्पन्न, धनी परिवार में जन्म लेने के बाद भी वह बहुत विनम्र व सुशील स्वभाव की महिला थी। सौंदर्य से सज्जित होने के बावजूद वह काफी नर्मीले स्वभाव की महिला थी। शिवदेवी के इन गुणों से मुंशीराम बहुत प्रसन्न चित्त रहने लगे।

दिन में तो वह तब ही थी कि वह मुंशीराम को भोजन कराने के बाद स्वयं भोजन करतीं। रात को मुंशीराम को अक्सर घर पर लौटने में देर हो जाती। इस कारण शिवदेवी रात को नानक चंद को समय से भोजन करा देती। इसके बाद अपना और मुंशीराम का भोजन उठा कर अपने कमरे में ले आती। जब मुंशीराम कितनी भी रात को लौट कर घर आते। वह अंगीठी पर उनका खाना गर्म कर उन्हें खिलाती। इसके बाद ही खुद भोजन करती।

एक दिन की बात है। मुंशीराम रात के आठ बजे घर वापिस लौटे। ज्यों ही वह गाड़ी से उतरे कि मुंशी त्रिवेदी सहाय ने उन्हें रोक दिया। उनके मकान के समीप ही बरेली के बुजुर्ग रईस मुंशी जीवन सहाय का मकान था। उन्हीं के बड़े लड़के मुंशी त्रिवेदी सहाय थे। जो मुंशीराम के बहुत अच्छे दोस्त थे। धन सम्पदा से यह परिवार सम्पन्न था जिसके कारण मुंशी त्रिवेदी मद्यपान के बड़े प्रेमी थे।

मुंशीराम को मुंशी त्रिवेदी अपने साथ अपने कमरे में ले गये। जहां शराब की बोतल उनका इंतजार कर रही थी। मुंशीराम ने पहले तो शराब पीने से मना कर दिया, परंतु बाद में अपने मित्र मुंशी त्रिवेदी के बहुत जोर देने पर वह शराब पीने को तैयार हो गये।

उन्होंने भी शराब का गिलास हाथ में ले लिया। मुंशी त्रिवेदी से उनके बहुत पुराने घरेलू संबंध थे। यद्यपि त्रिवेदी सहाय के छोटे भाई उनके मित्र थे फिर भी मुंशीराम को अपना बड़ा भाई मानते हुए भी उन दोनों के पीने पिलाने के संबंध थे।

शराब के गिलास के साथ गपशप भी चलने लगी। मुंशीराम ने पहला गिलास तो बड़ी शीघ्र चढ़ा लिया, ऐसा उन्होंने जल्द ही उठने की वजह से किया था। परंतु बातचीत चल रही थी और शराब भी

नशीली व अच्छे किस्म की थी। जब उन्हे शराब पीकर अपने घर जाने की याद आई, तब तक वह चार गिलास चढा चुके थे। घर जाने के लिए उठते ही उन्हें नशे का अनुभव हुआ। मुशीराम के उठते ही उनके दो मित्र भी उनके साथ उठकर चल दिए। उनमे से एक ने किसी वेश्या के घर चलकर मुजरा सुनने की इच्छा प्रकट की।

यद्यपि मुशीराम ने कई नाच रंग की महफिलो मे वेश्याओ का मुजरा अवश्य सुना था क्योकि उन दिनो यह बहुत प्रचलित था पर वे अब तक किसी वेश्या के कोठे पर नही गये थे। न ही आज तक उन्होने किसी वेश्या को अपने घर आमन्त्रित किया था।

शराब के नशे और मित्रो के साथ की वजह से वे अब एक वेश्या के कोठे पर जा पहुचे। नानक चन्द कोतवाल साहब के पुत्र मुशीराम को देखकर वेश्या की बाछें खिल गयी। सारी वेश्यायें झुक झुककर मुशीराम को सलाम करने लगी।

कोठे की नायिका को हुक्म सुनाया गया कि वह खुद मुजरा पेश करे, पर वेश्यायें हिचकिचा रही थी। इसका कारण यह था कि कोई अन्य पैसे वाला रईस मुजरा सुनने आने वाला था। इस कारण वेश्यायें मुजरा पेश करने मे हिचकिचा रही थी। क्योकि इन लोगो से पैसे मिलने की उम्मीद नही थी।

नशे के आधिक्य के बावजूद मुशीराम को वेश्याओ का अपना और अपने दोस्तो का जोरदार स्वागत और फिर वेश्या द्वारा मुजरे मे हो रही देर बरदाश्त नही हुई।

उन्होने उठकर वेश्या से बुरा भला कहना शुरू कर दिया। जिसको सुनते ही वेश्या का पूरा घर काप गया। एक वेश्या हाथ बढाकर मुशीराम के पैर छूना ही चाहती थी, कि मुशीराम जोर से चिल्लाये नापाक और उठकर उस कोठे से तुरत नीचे आ गये। नशे के आधिक्य से मुशीराम को कुछ याद भी नही था। बल्कि यह सब किस्सा बाद मे उनके दोस्तो ने उन्हें सुनाया।

मुशीराम गिरते-पडते अपनी गाडी मे सवार होकर अपने घर जा पहुचे। किसी तरह अपनी बैठक मे पहुच कर बिस्तर पर गिर पड

और पर साम्न की ओर पसार दिये।

घर के नौकर ने मुशीराम के जूते खोले। तब उन्होंने अपने कमरे मे जाना चाहा। परन्तु वह अकेले अपना सतुलन नहीं सम्हाल पा रहे थे। तब नौकर न उन्हें सहारा देकर ऊपर पहुचाया। जहा दोमजिले पर वह अपनी पत्नी के साथ रहते थे। छत पर पहुचते ही उनका सिर चकराने लगा और उन्हें बडे ही जोर की उल्टी हुई।

उनकी पत्नी शिवदेवी उठकर उनके पास आई व उन्हें उठकर सम्हालने लगी। पत्नी ने मुशीराम को पानी दिया, हाथ मुह धुलाकर गदे कपडे उतरवाये और साफ कपडे पहनाये। इसके बाद उन्हें सहारा देकर अदर अपने कमरे म ले गयी। जहा उन्हें बिस्तर पर लिटाया। फिर शिवदेवी न मुशीराम को चादर ओढाकर उनका माथा और सिर दबाती रही। कुछ देर बाद मुशीराम को आराम अनुभव हुआ और वे सो गये।

रात के करीब एक बजे मुशीराम की नीद खुली तब भी उनकी पत्नी उनके पैर दबा रही थी। उन्होंने पानी मागा तो शिवदेवी ने उठकर मुशीराम को पानी पिलाया और अगीठी से गर्म दूध पिलाया। दूध पीकर मुशीराम की कमजोरी काफी हद तक दूर हो गयी।

मुशीराम न उठकर कहा, 'देवी, तुम रात भर जागती रही, और भोजन भी नहीं किया। चलो अब उठकर भोजन कर लो।

'आपके बिना मैं कैसे भोजन करती। अब भोजन करने म क्सी रुचि।"

इस उत्तर न मुशीराम के हृदय को बुरी तरह झकझोर दिया। व्याकुलता म भी स्नेह और सफलता का इस अनोखी मूर्ति को देख मुशीराम का हृदय आत्मग्लानि से भर गया और उन्होंने आज के अपने आचरण का पूरा कथा अपनी पत्नी को सुना दी।

इसके बाद जब मुशीराम न अपनी पत्नी से क्षमा मागी, तब शिवदेवी न कहा 'आप मेरे स्वामी हैं, यह सुना कर क्यो मुझ पाप में डालना चाहते हैं। मुझे तो यही शिक्षा मिली है कि मैं हमेशा आपकी सेवा करू।

उस रात दोनो ही पति पत्नी बिना भोजन किय सो गय। दोना के भोजन न करन के कारण भले ही अलग थे पर दोनो पति पत्नी के बीच एक अनोखी समपण की भावना थी।

उस रात पत्नी शिवदवी की सेवा मुशीराम को आजीवन याद रही, जिसके कारण उनका सपूण जीवन ही बदल गया।

इसके बावजूद मुशीराम की शराब पीन की लत नही छूटी। उनके दोस्त उन्ह शराब पिलान अपन साथ ले जात। मुशीराम क पास अक्सर शराब पीने को पसे नही होते। इसलिए सब लाग बरली छावनी के एक शराब विक्रेता से उधार शराब खरीद लिया करत। फिर पूरी मित्र मण्डली बठकर शराब पीती। इस तरह शराब का उधार बढता गया। खच के लिए मुशीराम अपन पिता नानक चद से पसे मागा करते पर शराब के लिए पसे कस मागें। एक दिन शराब विक्रेता न शराब का बिल उनके घर भेज दिया। बिल भी पूर तीन सो रुपये का था। अब यह बिल कैस चुकाया जाय? इसकी चिता मुशीराम को लग गयी। उनका स्वाभाविक रहन सहन फीका पडन लगा।

एक दिन जब भोजन करात समय शिवदवी न मुशीराम स उनका इस उद्विग्नता का कारण पूछा तो उन्होन सारी बात सच सच बतला दी। यद्यपि उनके मन म बहुत सकाच था।

पत्नी शिवदवी न भोजनोपरात हाथ धोकर मुशीराम का अपन कमरे म बुला लिया और उन्होन अपन हाथ मे पहने सोन क कड उतार दिए और पति की ओर बढ़ाकर इन्ह बेचकर शराब का बिल चुकान की सलाह दी।

मुशीराम न हाथ हिलाकर मना करते हुए कहा, 'नहीं देवी, यह कसे हो सकता है। तुम्ह आज तक मैंन कोई आभूषण दिया नही उल्टा तुम्हारा जेवर बेचकर अपना शराब का उधार का बिल चुकाऊ?

इस पर शिवदेवी ने तनिक चिंतित हो पति के मुह की ओर देखा और कहा, 'इनम से एक जोडा पिता न और दूसरी ससुर जी न दी थी। इनम एक जोडी कगन व्यथ ही पडी थी। जब यह तन

आपका है तो यह कगन भी आपके ही हैं। इन्हें मैं आपके काम के लिए ही दे रही हू।"

मुशीराम निरुत्तर हो गये। उन्हें संस्कृत साहित्य का वह श्लोक याद आया, जिसका अर्थ है देवी पतिव्रता स्त्री के रूप मे पति की स्वास्थ्य रक्षा के समय, माता विपत्ति के समय, भगनी और सतान सुख पहुचाने के लिए धर्मपत्नी का रूप धारण करती है।

लाचार होकर शिवदेवी की बात माननी पडी। कडे बेचकर उन्होंने अपनी शराब का उधार चुका दिया। परतु उसी क्षण मन मे सकल्प किया कि जब वे कमाने लायक बन जायेगे तो सबसे पहले पत्नी को कडे खरीद कर वापस कर देंगे।

मुशीराम का मन अब कुछ कमाने धमाने की ओर लग गया। उनके मन मे अपनी पत्नी के अपरिमित त्याग ने पतिव्रता स्त्रियो के प्रति अगाध श्रद्धा की भावना भर दी थी। वे अपने दिल मे भारतीय स्त्रियो का पूरा पूरा सम्मान करने लगे। इसका श्रेय निश्चित रूप से उनकी पत्नी शिवदेवी को ही है।

10 सरकारी नौकरी

मुशीराम की पढाई छूट चुकी थी। अब उनके पिता नानक चद को उनके लिए कही नौकरी की चिंता हुई। मुशीराम के सभी भाई पहले से ही नौकरी कर रहे थ। मुशीराम भी गृहस्थ जीवन मे काफी समय पूव प्रवेश कर चुके थे। उनके अपने व्यक्तिगत खर्चे थे। उनकी पत्नी के भी अलग व्यक्तिगत खर्चे थे। उनके लिए धन की बहुत आवश्यकता थी। जो हमेशा पिता नानक चन्द से नही मागा जा सकता था।

मुशीराम स्वय भी स्वावलम्बन के सिद्धात मे विश्वास करत थे। अब उनकी पढाई भी छूट ही चुकी थी। इसलिए जीवन यापन क लिए और समय काटन के लिए भी नौकरी की बहुत आवश्यकता थी।

मुशी के पिता पुलिस विभाग मे शहर कोतवाल थे। बाकी दोनो भाई भी थानेदार थ। इसलिए नानक चन्द मुशीराम को भी पुलिस विभाग म या किसी अन्य सम्मानित विभाग मे किसी सम्मानित पद पर नियुक्त कराना चाहते थे। उन दिनो आज की तरह सघ लोक सेवा आयोग, या प्रान्शिक सेवा आयोग नही थे। बल्कि कमिश्नर, कलेक्टर, पुलिस सुपरिंटेंट, आदि सब इस्पेक्टर या नायब तहसीलदार, तहसील दार आदि नियुक्त कर सकते थे।

बरेली के कमिशनर एडवर्ड की, मुशीराम के पिता नानक चन्द पर बहुत ज्यादा कृपादृष्टि थी। अत एक दिन उपयुक्त समय देखकर नानक चद ने बरेली शहर के तत्कालीन कमिश्नर एडवर्ड स मुशीराम के लिए किसी अच्छी नौकरी के लिए कहा। कमिश्नर साहब न मुशीराम का नाम तहसीलदार पद के लिए भेजन का पक्का आश्वासन नानक चद को दे दिया।

नानकचद की प्राथना के चद दिनो बाद ही एक नायब तहसीलदार

दार छुट्टी पर चले गये। कमिश्नर साहब ने तुरंत ही मुंशीराम की नियुक्ति नायब तहसीलदार पद पर कर दी।

इस प्रकार मुंशीराम अपने पिता नानकचन्द के प्रभाव से नायब तहसीलदार के सम्मानित पद पर जा पहुंचे। अब वह भी अपने परिवार में स्वावलम्बी या सीधे शब्दों में कहा जाय तो अपने परों पर खड़े हो गये थे। उस समय इस तरह के सम्मानित पद उन व्यक्तियों को ही दिये जाते थे जिन पर अंग्रेज सरकार का अगाध विश्वास हो। कमिश्नर एडवर्ड को नानक चंद और मुंशीराम पर अगाध विश्वास था। इसलिए मुंशीराम को नायब तहसीलदार नियुक्त किया था।

मुंशीराम ने भी बड़ी ही योग्यता, कुशलता और जिम्मेदारी से यह महत्त्वपूर्ण पद सम्भाला। उनकी नीति, विवेक और तात्कालिक निर्णय क्षमता ने उनको अपने पद का निर्वाह करने में विशेष मदद दी।

भाग्यवश उन्हीं दिनों तहसीलदार छुट्टी पर गये। इन दिनों कमिश्नर साहब मुंशीराम के कार्यों से बहुत प्रसन्नचित्त थे। इस कारण कमिश्नर साहब ने मुंशीराम की नियुक्ति तहसीलदार के पद पर कर दी।

कुछ दिनों तक मुंशीराम ने तहसीलदार जैसे जिम्मेदारी के पद का बहुत अच्छी तरह निर्वाह किया। अब यह निश्चित होने लगा कि कमिश्नर साहब उनकी कार्य कुशलता के आधार पर उन्हें स्थाई रूप से तहसीलदार के पद पर नियुक्त कर देंगे। परन्तु मुंशीराम के भाग्य में मात्र तहसीलदार जैसा तुच्छ पद नहीं था। भाग्य देवता ने उन्हें भगवान मुंशीराम और स्वामी श्रद्धानन्द बनने के लिए भेजा था। जिससे वह लाखों पद दलितों, विधवाओं का कल्याण करें और सनातन हिन्दू परिवारों को पाखंड, अविवेक से मुक्त करें।

बरेली शहर के आस-पास आठ दस मील के फासले पर उन समय अंग्रेजी फौज ने अपना डेरा डाल रखा था। उन समय भी सेना को आज की तरह सम्मानित समझा जाता था। सेना को रसद पहुंचाने की सारी जिम्मेदारी अंग्रेज कमिश्नर ने तहसीलदार मुंशीराम को सौंपी था। पहले तो मुंशीराम ने अंग्रेज फौज को रसद पहुंचाने की जिम्मे

द्वारा खुद सम्हाली। फिर उन्होंने कुछ दुकानदारों को सामान पहुंचाने की जिम्मेदारी सौंप दी। जो वहीं यानी फौजी डेरा के पास अपना सामान रख कर बैठने लगे। छावनी के फौजी अफसर उन दुकानों से सामान लेने लगे।

एक दिन गोरे सिपाहियों ने वहीं एक अंडे वाले से उसके अंडे बिना दाम दिये छीन लिये। बहुत मांगने पर भी अण्डे वाले को फौजी अफसरों ने अण्डे के पैसे नहीं दिये। यह अण्डे वाला भी मुंशीराम तहसीलदार के आदेश पर ही अपने अण्डे बेचने वहां आता था।

अण्डे वाले ने अंग्रेजी फौज की इस ज्यादती की शिकायत तहसीलदार मुंशीराम से की। मुंशीराम ने उन फौजियों से गरीब अण्डे वाले का पैसे देने को कहा। किंतु अंग्रेज फौजी अधिकारियों ने उनकी बात हंसी में टाल दी। इस बदतमीजी से चिढ कर मुंशीराम ने अंग्रेजी फौज के कर्नल से इस घटना की शिकायत की। जिसे सुनकर अंग्रेज कर्नल ने मुंशीराम से कहा, "उन फौजियों ने अण्डे वाले को पैसे न देकर बिल्कुल ठीक किया।"

मुंशीराम ने कहा कि यह दुकानें उनके कहने से फौजी छावनी के समीप लगाई गई है। अगर अण्डे वाले के पैसे फौजियों द्वारा नहीं दिलवाये जायेंगे तो वह सारी दुकानें वहां से उसी समय हटवा देंगे।

अंग्रेज कर्नल मुंशीराम के इस उत्तर से और ज्यादा चिढ गया। उसे यह बात बड़ी अजीब सी लगी कि एक मामूली अफसर फौज के अफसर को य जवाब दे। उसे नहीं पता था कि मुंशीराम किस मिट्टी के बने हुए हैं। उसने क्रोध में आपे से बाहर होते हुए कहा, 'अगर तुमने ये दुकानें हटवायी तो तुम नुकसान उठा जाओगे।' इसके बावजूद अंग्रेज कर्नल ने एक भी पैसा नहीं दिया।

मुंशीराम भी क्रोध में आ गये उन्होंने साफ शब्दों में कह दिया, बिना अण्डे वाले को पैसे दिये वह और दुकानदारों को दुकान चलाने की इजाजत नहीं देंगे।

मुंशीराम के इस जवाब से चिढ़ कर अंग्रेज कर्नल क्रोध में मुंशीराम की ओर बढा, मुंशीराम ने भी अपने घोड़े का चाबुक कस

कर हाथ म पकड लिया। अग्रज कनल हैरानी से हक्का बक्का रह गया। कोइ अदना हिन्दुस्तानी एक अग्रेज कनल को मारने को न्तार हो सकता है। एसा व्यक्ति बहुत खतरनाक हो सकता है। वह तत्काल वहीं खडा रह गया व हक्का बक्का सा मुशीराम का मुह देखता ही रह गया। मुशीराम उसी घोडे पर बठकर फौजी छावना से चले गय।

उसी दिन उस अग्रेज कनल न, कमिश्नर साहब स शिकायत की। कनल की शिकायत की बात मुशीराम के कान म भी पड गयी। उ होन कमिश्नर के पूछन पर सारी घटना सुना दी।

सब कुछ सुनकर कमिश्नर ने मुशीराम को समझाया कि उन्हें धय स काम लेना चाहिए। अभी उन्हें तहसीलदार क पद पर स्थाई होना है। इन छोटी छोटी बातो से उनको व्यक्तिगत रूप से कुछ भी लाभ नही होगा। कमिश्नर की यह बातें सुनकर मुशीराम को विश्वास हो गया कि कमिश्नर न सारी बातो को सत्यता पूण समझ लिया था। इसके बावजूद कमिश्नर ने उल्टा उन्हें ही समझाना उचित समझा। सत्य असत्य, न्याय अन्याय की उस अग्रेज कमिश्नर न न तो कोई परख की और ना ही कोई परवाह।

उन्होन अच्छी तरह समझ लिया कि अग्रज अपने को शासक समझते हैं। इसलिए जायज नाजायज कुछ भी करन से नहीं हिचकते ह। अग्रजो के प्रति मुशीराम के मन मे यह धारणा पहले स थी जो अब और पक्की हो गयी। मुशीराम को लगन लगा कि इस स्थिति म अग्रजो के साथ सारी जिंदगी निभाना मुश्किल हो सकता है।

मुशीराम का स्वतन्त्र और स्वाभिमानी मन इस बधन को कदापि स्वीकार न कर सका। उन्होने नौकरी से तुरन्त इस्तीफा दे दिया।

मुन्शीराम क मन मे अब स्वतन्त्र और आत्मनिभर रहने का निश्चय जोर पकडने लगा।

तभी नानक चन्द का स्थानातरण सबडिवीजनल आफिसर खुर्जा के पद पर हो गया। मुशाराम भी सपरिवार पिता क साथ खुर्जा चले गय।

उन्होन अपनी कमाई के 200 रुपय नानक चन्द को दे दिय। जिससे वह मुन्शीराम स बहुत प्रसन्न हुए।

उस समय कमिश्नर पद पर एक अन्य अंग्रेज माइकल साहब आ गये थे जो कि मुंशीराम से बहुत प्रसन्नचित्त थे। जब वह एक सरकारी दौरे पर खुजा आये तो। नानकचन्द ने मुंशीराम के सम्बन्ध में उनको पूरी बात बतलाई और उन्हें कहीं अन्य नौकरी दिलवाने की प्रार्थना की।

पर मुंशीराम ने साफ शब्दों में अपने पिता से कह दिया कि वह अंग्रेज सरकार की या किसी की भी नौकरी स्वीकार नहीं करेंगे।

उनका अंग्रेज शासक या शासकों से कोई भी व्यक्तिगत विरोध नहीं है। बल्कि वह अब कोई स्वतन्त्र व्यवसाय करना चाहते हैं। जहां स्वाभिमान, अपने मन की शांति और स्वतन्त्रता हो।

मुंशीराम के इस उत्तर से पिता से नहीं रहा गया। उनकी समझ में ऐसा कौन-सा स्वतन्त्र व्यवसाय था।

तब मुंशीराम ने वकालत पढ़ने की बात की। कुछ विचार विमर्श करने के बाद नानक चन्द मुंशीराम को वकालत की पढ़ाई कराने को तैयार हो गये।

11 लाहौर मे अध्ययन

तहसीलदारी जसे सम्मानजनक प्रशासनिक पद को त्याग कर सन 1880 ई० मे लाहौर कानून पढने पहुचे ।

लाहौर का वातावरण मुशीराम को बहुत अच्छा लगने लगा । उस समय वहा का वातावरण बहुत स्वस्थ था । प्राकृतिक रूप से भी लाहौर बहुत ही सम्पन्न था । मुशीराम लाहौर म एक ही दिन सोय, दूसरे दिन सुबह उठत ही उ हे अपने व्यक्तित्व मे अनोखा परिवतन आ गया । एसा लगा जसे उनके मन मे उत्साह और शरीर म स्फूर्ति थी । प्रात उठकर वह सुबह सुबह घूमन गए । उस समय तक मुशीराम का आत्मिक और नतिक चितन काफी बढ गया था । सुबह घूमते हुए वे प्रकृति और उसके रचियता ईश्वर के बारे म सोचत रहे थे । स्थूल दृष्टि से ऊपर उठकर वे ईश्वर और ईश्वरत्व पर विचार करत थे ।

इस बार मुशीराम कानून का अध्ययन करन आय थे । इसलिए बहुत ही मन लगाकर पढाई मे मन लगान लगे । दिन म कक्षा म ध्यान पूवक पढते और रात के समय अपने कमरे म बहुत रात तक नियमपूवक अध्ययन करते ।

प्रथम रविवार के दिन मुशीराम नहा धोकर आय समाज मन्दिर गय । जहा हरिकीतन चल रहा था । आय समाज मदिर म सुबह कीतन भजन और उसके बाद व्याख्यान होत थे जिनम पौराणिक हिन्दू गाथाओ का खडन, समाज-सुधार, यानि विधवा विवाह सती प्रथा और बाल विवाह पर चर्चायें होती ।

आय समाज के अतिरिक्त लाहौर म ब्रह्म समाज का ब्रह्म मदिर भी था । मुशीराम एक दिन सुबह के समय वहा भी गय ।

ब्रह्म मदिर म भजन कीतन तराने और उसके बाद व्याख्यान होते,

उस दिन वहा शिवनाथ शास्त्री का व्याख्यान था। शिवनाथ शास्त्री ने 'भक्ति के महत्व' पर प्रकाश डाला। मुशीराम ने बडे ही ध्यानपूर्वक पूरा व्याख्यान सुना और वह उससे बहुत ज्यादा प्रभावित हुए। उन्होंने उसी दिन ब्रह्म समाज से सबधित पुस्तकें खरीदी।

उस दिन सारी रात मुशीराम ने ब्रह्म समाज से सम्बधित पुस्तकें पढ डाली। एक पुस्तक तो उन्होने पूरी समाप्त कर ली।

पाच छ दिन मुशीराम उन पुस्तको को अच्छी तरह पढते रहे। उन पर मन ही मन विचार विमर्श करते रहे।

उस समय लाहौर शहर मे लाला काशीराम नामक एक सज्जन नव विद्या समाज के मुखिया थे। उन्होने एक पुस्तक पुनर्जन्म का खण्डन करते हुए लिखी थी। जो बहुत ही चर्चित हुई थी। परन्तु ब्रह्म समाज मे जीवात्मा का उत्पत्ति को लेकर उसकी अनन्त उन्नति का विस्तृत अध्ययन किया गया था।

दोनो ही समाज यानी मतावलम्बो की पुस्तको मे विपरीत बातें कही गयी थी। जिस कारण मुशीराम के मन मे अनेक शकाएं उठ रही थी।

मुशीराम एक दिन सुबह लाला काशीराम के घर जा पहुचे ताकि इन शकाओ का कोई समाधान निकाला जा सके।

लाला काशीराम से मुशीराम की मुलाकात हुई और उन्होने अपनी सभी शकायें लाला मुशीराम के सामने रखी। लाला काशीराम ने मुशीराम की शकाओ का पूरी तरह समाधान करने का प्रयास किया। पर वह तो ज्ञान व विवेक से हर शका का समाधान चाहते थे। साथ ही ज्ञान के वह अघट प्यासे थे।

लाला काशीराम ने मुशीराम को अपनी एक और पुस्तक दी ताकि उनकी शकाओ का समाधान हो सके।

मुशीराम ने सारे दिन मे उस पुस्तक का आद्योपात पढ डाला था। फिर भी उनकी शकाये बढती गयी। शाम को जब मुशीराम लाला काशीराम के घर गए तो वह वहा मिले नही। सारी रात मुशीराम बेचैन रहे और सारी रात चिंतन करते रहे।

दूसरे दिन सुबह मुशीराम लाला काशीराम के घर जा पहुचे। उस

समय लाला काशीराम घर पर ही थे। मुंशीराम न अपनी सभी शकायें उनके सामने रखी। जिसके उत्तर म लाला काशीराम कुछ नहीं बोले उन्होंने मुंशीराम को, केशव चंद्र सेन और बाबू प्रताप चन्द्र मजूमदार लिखित पुस्तकें पढन की राय दी। मुंशीराम इन दोनों ही पुस्तको को काफी पहले पढ चुके थे। लाला काशीराम मुंशीराम के तर्क सुनते रहे। ब्रह्म समाज के तर्क मुंशीराम को बहुत प्रभावशाली या तर्क-सगत नही लगे। जिनसे मुंशीराम की पूरी तरह तसल्ली नहीं हुई। इसके विपरीत मुंशीराम पुनर्जन्म और कर्मफल पर यकीन करने को मजबूर हो गए।

उस समय अचानक उन्हें बरेली मे स्वामी दयानंद और पादरी स्काट के व्याख्यानों की याद आ गयी। यद्यपि दयानंद ने भी उस समय कर्म के फलाफल की बात की थी। मुंशीराम को उसी दौरान स्वामी दयानंद की पुस्तक सत्यार्थ प्रकाश पढने की इच्छा हुई ताकि वे अपनी सभी शकायें मिटा लें।

मुंशीराम उसी समय सीधे आर्य समाज मंदिर जा पहुंचे और पुस्तकाध्यक्ष लाला केशवराम को ढूंढने लगे। लाला केशवराम उस समय आर्य समाज पुस्तकालय म उपस्थित नही थे। अतः उन्हें बडी देर की प्रतीक्षा के बाद भी सत्यार्थ प्रकाश प्राप्त नहीं हुई।

अपनी अघट उत्कंठा को मुंशीराम रोक न सके। उन्होंने बाजार खुलते ही सत्यार्थ प्रकाश को खरीदा और उसी समय पढने बैठ गए और तब ही उठे जब पुस्तक पूरी समाप्त कर ली।

लाहौर में मुंशीराम के निवास स्थान के समीप ही सर्वहितकारिणी सभा का दफ्तर था। जहा मुंशीराम यदा-कदा चले जाते थे।

वहा आते जाते रहने से मुंशीराम के मन म देश प्रेम की भावना का उदय हुआ। आर्य समाज और ब्रह्म समाज दोनों म ही वह जाने लगे। मनोविज्ञान और तर्क शास्त्र के विद्वान होने के कारण वह पुस्तकों या किताबी ज्ञान से सतुष्ट नही हो पाते थे। हर बात को तर्क की कसौटी पर कस कर देखते थे। केवल पुस्तको तक ही उनका जीवन बधा हुआ नहीं था। बल्कि वह अपनी धुन के पक्के और अपने ही

विचार विवेक से चलने वाले बन गए थे।

इस तरह लाहौर म उनका जीवन सावजनिक धम सभाओ की ओर मुड गया। जिसन एक वार फिर उनकी पढाई पर अपना प्रभाव डाला।

सभा सोसायटी म घूमन, घर के काम काज के चक्कर म उनकी कानून की पढाई चौपट हो गयी। वह अपन कालेज तक भी नही जा पात। जिसके कारण उनकी उपस्थिति बहुत कम हो गयी। जिसके कारण वह कानून की परीक्षा म हा नही वठ सकते थ।

जब मुशीराम न देखा कि वे कानून की परीक्षा दे ही नही पायेंगे तो उन्होन मुख्तारी की परीक्षा के लिए अपना नाम लिखवा लिया।

मुख्तारी की परीक्षा के लिए उन्होने जमकर तयारी की और परीक्षा दे डाली। भाग्यवश मुख्तारी की परीक्षा म बहुत अच्छे अका सहित उत्तीण हो गये।

12 आर्य समाज मे प्रवेश

लाहौर म मुख्तारी की परीक्षा पास कर मुशीराम लाहौर से फि जालधर आ गए। जहा वह मुख्तार बनकर अपनी वकालत का का करने लगे। मुशीराम तेज दिमाग, लगनशील और घोर परिश्रमी थ जिस कारण उनकी वकालत चल निकली।

अदालत म वकालत के साथ मुशीराम अपन अय सामाजिक क्रिया कलापा मे भाग लेन क कारण शेरो शायरी मुशायरो म भाग लन लगे। ऐसे समय म भी मुशीराम हमेशा मुखिया बन रहत और हमेशा आमोद-प्रमोदा म जी खोलकर हिस्सा लेते।

पर भगवान को उनका चन स बठना ज्यादा दिन अच्छा नहीं लगता था। इसी कारण विश्वविद्यालय से यह नया नियम निकला कि अब एक वष वाद जो विद्यार्थी स्नातक परीक्षा म उत्तीण नही हागा उसे आगे कानून की परीक्षा म शामिल नही किया जायगा। मुशीराम यह नियम दखकर चिन्तित हो गए। क्योकि उन्ह हर हाल म वकालत पास करनी थी। अत जालधर म चल रही मुख्तारी छोडकर पुन लाहौर जा पहुचे और फिर कानून की कक्षा म अध्ययन करन लगे।

पर यह अध्ययन ज्यादा दिन चलने वाला नही था। मुशीराम पहले ही नियमित रूप से आय समाज और ब्रह्म समाज क मन्दिरो म जान लगे। उन दिना ब्रह्म समाज म श्री विश्वनाथ शास्त्री क भक्ति भावपूण व्याख्यान होते। जिनसे मुशीराम वड ही प्रभावित हुए। परन्तु कम क सिद्धात और पुनजम के सबध म वह ब्रह्म समाज से मल नहीं खात थ। अपनी इस जिज्ञासा क कारण मुशीराम न सत्याथ प्रकाश को कई बार आद्योपात पढ डाला, जिसमे पुनजम क विषय म पढ़ कर उनके मन को बहुत शाति मिली। साथ-साथ ही अय समुल्लासो

को पढ़ने के कारण उनका झुकाव पूरी तरह आय समाज की दिशा मे हो गया।

सन 1884 ई० (सवत 1941) के माघ माह का महीना था। उस दिन रविवार का दिन था। मुशीराम पर अब तक आय समाज का रग पूरा तरह चढ चुका था। धम विषयक अनेक शकाओ को दूर करने के लिए वह सत्याथ प्रकाश का अध्ययन दिन मे तीन-चार घटे करते थे।

अनारकली मोहल्ले मे रहमत खा मोहल्ले के अहाते मे एक तीन कमरे वाली कोठी के बायी ओर वाले कमरे मे मुशीराम रहने लगे थे। उस दिन वे प्रात काल एक कुर्सी पर बठे हुए थ। सत्याथ प्रकाश का आठवा समुल्लास उनके सामने खुला हुआ था।

उस समय मुशीराम दोनो हथेलिया खोले उन पर सिर टिकाये किसी गम्भीर चितन मे लीन थे कि तभी वहा सुदरदास जी ने प्रवेश किया। सुन्दरदास, लाला आलोक राम के छोटे भाई थ। लाला आलोक राम व्यवसाय से तो वकील थे पर उन दिनो अग्रज सरकार के खिलाफ चल रहे रावलपिंडी आन्दोलन के सक्रिय कायकर्ता थ।

सुदरदास जी ने मुशीराम से पूछा "कहिए किस चिता म फस हुए हैं। कुछ निश्चित कर पाए या नहीं।'

मुशीराम बोले, "पुनजन्म के सिद्धात पर फसला कर लिया है आज मैं सच्चे विश्वास के साथ आय समाज का सभासद बन सकता हू।'

सुदरदास जी मुशीराम के इस उत्तर को सुनकर बहुत ज्यादा प्रसन्न हुए। उनके चेहरे पर उल्लास की आभा उतर आइ। वे खुद एक बहुत कमठ आय समाजी कायकर्ता थे।

उन्हें सब भाई सुदरदास कहकर पुकारते थे। सुदरदास जी उसी भ्रात भावना से सबका काम करते। उनकी इस सेवा भावना न उनका हृदय पूरी तरह पवित्र कर रखा था। उनके इस वर्ताव के कारण सारे लोग सचमुच ही उनके भाई बन गए थ।

सुन्दरदास जी उस दिन मुशीराम के पास जमकर बठ गए। वहीं यानि मुशीराम के घर से सुन्दरदास जी और मुशीराम नहा धोकर आय समाज की ओर गए।

मुशीराम और भाई सुन्दरदास उस दिन शाह ए आलमी दरवाजे के रास्ते से लाहौर शहर के अन्दर होते हुए लाहौर शहर का प्रसिद्ध बच्छो वाली गली में पहुंच गए जहां उस समय आर्य समाज मंदिर था। बच्छो वाली गली का यह मन्दिर ही आर्य समाज मन्दिर कहलाता था।

द्वार के समीप अंदर जाते ही, बायीं ओर बड़े आंगन के पास वाले दालान में एक मेज थी। उसके नीचे आंगन में बड़े तख्त पर उपासना करने वालों के लिए स्थान था। उसके सामने खड़े होकर देखने पर बायीं दिशा में छोटा सा पुस्तकालय दिखाई पड़ता था।

जिस समय भाई सुन्दरदास और मुन्शीराम आर्य समाज मन्दिर पहुंचे उस समय आर्य समाज मन्दिर की शोभा निराली थी। दानों पहले वाले गायक जो हर सप्ताह भजन गाया करते थे, उस समय भी सुमधुर भजन गा रहे थे। श्रोतागण बैठे हुए बड़े ही भक्ति भाव से सुन्दर भजनों का रस्वास्दन कर रहे थे। संगीत का यह कार्यक्रम चल ही रहा था।

मुशीराम सामने वाली दीवार के समीप जा बैठे। उसी समय भाई सुन्दरदास जी ने लाहौर आर्य समाज के प्राणदाता लाला साइदास के कान में यह बतला दिया कि आज मुशीराम जैसे तेजस्वी व्यक्ति आर्य समाज के सदस्य बनने आए हैं।

भाई सुन्दरदास की यह बात सुनते ही लाला साइदास खुशी से झूम उठे। उन्होंने दो-तीन मिनट तक भरी भरी आंखों से मुशीराम को देखा और अपने पास बुलाकर मुशीराम की पीठ थपथपाई। उसी समय लाहौर आर्य समाज के एक अन्य कार्यकर्ता भाई दित्तासिंह ने खड़े होकर मुशीराम के आर्य समाज में विधिवत प्रवेश की घोषणा कर दी। इस तरह मुशीराम विधिवत आर्य समाज के सभासद हो गए।

लाला साइदास उस समय बहुत प्रभावशाली आर्य समाज के नेता थे। इसके अलावा साइदास का व्यक्तित्व बहुत ज्यादा प्रभावशाली था। उस समय भारत के चारों ओर विदेशी संस्कृति और सभ्यता का उदय हो रहा था। पढ़े लिखे तथा शिक्षित कहलाये जाने वाले लोग अंग्रेजी साहबियत और संस्कृति में बुरी तरह रंगे हुए थे। ऋषि दयानंद ने अपने

उपदशा स स्वदेशी को अपनाने पर जोर दिया था। नाला साइदाम सिर से पर तक स्वदेशी रग म रगे हुए थे। उनके सिर पर सदा लुधियाना की बनी हुई लुगी बधी होती, गले मे सादा गवरून का कुर्ता, स्वदेशी माटी धोती और परा म सादा पजाबी जूता होता था। वे उस समय पजाब हाई कोट म हिन्दी अनुवादक के पद पर काय कर रहे थे। परन्तु इसके बावजूद सदा देशी कपड पहनते थ।

उस दौरान भाई दित्तासिह के बाद लाहौर आर्य समाज के नेता यानि मन्त्री पद पर जवाहर सिह आये। एक अधिवेशन के दौरान उन्होने मुशीराम के आय समाज म प्रवेश करने पर बहुत प्रसन्नता व्यक्त की। इसके बाद उन्होने यह घोषणा कर दी कि अब मुशीराम उपस्थित सज्जनो के समक्ष कुछ कहेंगे।

मुशीराम यह घोषणा सुनकर चकरा गये। क्योकि उन्होने साव जनिक रूप से कभी कोई भाषण नही दिया था। इसके पहले विद्यार्थी या मुख्तार बन जाने पर अदालतो म उन्होने तक-वितक अवश्य किया था। किन्तु सवसाधारण के सामने, वह भी धम के मामले म कुछ कहने का उन्हें कोई अवसर नही आया था।

फिर भी मुशीराम उठे और अपने मन म, धम, पाखड पुनज म आदि विषयो पर थोडी देर बोले, अत मे उन्होने यह भी कहा, "हम सबके कतव्य और मतव्य एक होने चाहिए और इसी कारण जो वदिक धम के सिद्धाता के अनुकूल जीवन न ढाल रहा हो उसे उपदेशक बनने का साहस नही करना चाहिए। भाडे के इन टटटुओ से धम का प्रचार नहीं हो सकता है। इस महान पवित्र काय के लिए निस्वार्थी त्यागी पुरुषो की आवश्यकता होगी।

अपनी आत्मकथा म स्वामी श्रद्धा न एक स्थान पर लिखा है। मुझे अपने आयसमाज म प्रवेश से पहले का हाल नही मालूम था। पर यह अवश्य मालूम था कि उस समय सिवाय एक वतनिक उपदेशक के और कोई भी उपदेशक का काय नहीं करता था। और सिवाय मुसलमानो खाविन्दो के लाहौर आय समाज का कोई भी सभासद तक भी स्वय ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना के भजन

गायन नही किया करता था।"

इस उपदश के बाद स मुशीराम ने पहले आय समाज का हा नुया करन का दृढ निश्चय किया।

लाहौर के जीवन म, मुशीराम द्वारा आय समाज क प्रवश के दौरान अनक परिवतन आय। मुशीराम का व्यक्तिगत जीवन भी धीरे धीरे बदलन लगा। उनके विचारो म, भावनाओ मे खान पान म धीरे धीरे परिवतन आन लगे। वास्तव म अव मुशीराम को अपन जीवन की उपयोगिता का पता चला।

लाहौर म विद्यार्थी काल से ही मुशीराम दोनो समय प्रात काल और साय काल काफी दूर तक घूमने जाया करते थ। साय काल को अपन कानून के सहपाठियो के साथ मुन्शीराम वात चात करत हुए बडे धीरे धीरे टहलते फिर थोडी दूर दौड लगाते।

एक दिन होली स चार पाच दिन पूव की घटना है। मुशीराम लगभग पाच बजे के आस पास अनारकली पहुचे। जहा पर मुशीराम एक स्थान पर खड होकर, वाटिकाओ से आती सुगधित हवा का आनन्द लेते हुए पुष्पो स खिली वाग की छटा दख रह थ कि उसी समय उन्होने एक आदमी को सिर पर एक मास का टोकरा उठाय जाते दखा। टोकरी को ले जान वाला व्यक्ति जल्दी जल्दी मास स छुटकारा पाना चाहता था। इसलिए वडी ही तेजी से भागता हुआ जा रहा था। मुशीराम न दखा टोकरे मे भेड वकरियो की टागें उघडी हुई खाल मास और मास क टुकडे पड हुए थे।

मुशीराम, जो थोडा पहल वाग के सुन्दर फूल दख रह थ वाग का सुवासित हवा ले रह थे मन जहा इन प्राकृतिक सपदा स सुवासित हो गया था, वही मास क टोकरे से मन घृणा स भर गया।

या तो मुशीराम खुद मास खान के बहुत शौकीन थ और इस तरह क मास क टोकरे उघडी हुई टागें और उघडी हुई खालें दखते रहते थ। किन्तु उस समय ही उन्हें मास से इस तरह की विरक्ति हुई था।

मुशीराम के परिवार म वाल्यकाल स मास खाया जाता था। क्षत्री

समाज म जम लेन के कारण मुशीराम, उनके पिता नानक चद सब मास खाया करते थे। मास खाना उनके समाज मे प्रतिष्ठा का सूचक था। इस कारण उनके घर मे नियमित रूप से मास बनता था और घर का हर प्राणी मास खाता था।

उस दिन उस मास के टोकरे को देखकर मुशीराम का मन बहुत खिन्न हुआ और वे चिंतित मुद्रा मे अपन घर की ओर चल दिए।

स्नानादि से निवृत्त होकर उन्होने सत्याथ प्रकाश को पढन को उठाया। सत्याथ प्रकाश के दशम समुल्लास मे मास भक्षण के दोषा का वणन था। उसके अध्ययन तक शाम हो गयी। मुशीराम हाथ मुह धाकर भोजन करन पहुचे तो हमशा की तरह उस दिन भी खान की थाली म मास की कटारी थी। उस दिन स ही उन्हें मास खाने से घृणा हुई, जिस कारण उन्होन माम की कटारी को उछाल कर फेंक दिया। उस दिन से उन्हान जीवन पयन्त मास नही खाया।

कुछ दिन तक उन्हें हमेशा की तरह मास खाने की इच्छा हाती थी। पर धीरे धीरे मासाहार के प्रति घणा हो गयी। तत्पश्चात उन्होंन अपन मन स मासाहार को निकाल फेंका।

यह सत्य अहिंसा का वह रास्ता था जिस पर मुशीराम अब चल रहे थ। विद्यार्थी जीवन म ही मुशीराम का कई बुरी लतें लग गयी थी जिसम शराब पीन की भी आदत पड गयी थी। मुशीराम एक सपन्न और प्रतिष्ठित परिवार के रोशन चिराग थ। उन दिनो शराब पीना या वेश्यागमन कोई बुरा काम नही माना जाता था। बल्कि यह उच्च कुल प्रतिष्ठा की वस्तु मानी जाती थी।

मुशीराम मुख्तार हो चुके, वकालत का पशा कर रहे थ। इनके साथ ही वकालत की परीक्षा लाहौर स द रह थे।

एक दिन शाम को मुशीराम अपने एक वकील मित्र के साथ बठ कर शराब पी रहे थे। काफी देर तक दोनो मित्र शराब के गिलास पर गिलास चढा रहे थ।

उनके मित्र वकील साहब को कुछ ज्यादा नशा चढ़ गया तब वह

तो अपने कमरे म सोने को चले गये। मुशीराम का नशा अभी कुछ कम था अत वह बची हुई शराब को ठिकाने लगाने लगे।

तभी उ होने एक चीख की आवाज सुनी, जो निश्चित रूप से किसी स्त्री की थी। मु शीराम को अभी होश बाकी था वह गिरते-पडते उठकर बाहर आये तो देखा उनके वकील मित्र शराब के नशे म एक स्त्री को निवस्त्र किये दे रहे थे। स्त्री अपनी इज्जत बचाने के लिए ही जोर से चिल्ला रही थी। मित्र नशे म आपे से बाहर था उसे इस समय अच्छे बुरे का कोइ ज्ञान नही था।

मुशीराम न बलपूवक उस मित्र को खीचकर अलग हटाया और उस युवती की उस कामी पुरुष से रक्षा की। इस घटना स मु शीराम को एक नयी दिशा मिली। उनके ज्ञान चक्षु खुल गए। उ हें शराब और नशीले पदार्थों का दुष्प्रभाव आज मालूम पडा। उसी दिन से या उसी समय स मु शीराम न शराब का परित्याग कर दिया।

अब मु शीराम नियमित रूप स आर्य समाज म व्याख्यान सुनने जाते जहा उन व्याख्याना को सुनते और उन पर मनन करते चिन्तन करते थे।

एक दिन आय समाज मन्दिर म पडित गुरुदत्त का व्याख्यान था। मु शीराम उनके प्रवचना को सुनन का बहुत उत्सुक रहत थे। उसका कारण यह था कि महर्षि दयानद क बाद पडित गुरुदत्त के व्याख्यान म मु शीराम अत्यधिक प्रभावित हुए हुए थे।

उस दिन पडित गुरुदत्त न तम्बाकू के गुण अवगुणो पर प्रकाश डाला। तम्बाकू से शरीर पर होन वाले नुकसाना की व्याख्या की। तम्बाकू के दुष्प्रभावो का विस्तृत वणन किया। जिसे सुनकर मु शीराम बहुत प्रभावित हो गए और उसी दिन स उ होने तम्बाकू और हुक्का पीना छोड दिया। अपने इस निश्चय पर आयु पय त टिके रहे।

कुछ दिना बाद मु शीराम न यह महसूस किया कि उनके तम्बाकू परित्याग म उनके शरीर को आलस स भी छुटकारा मिला है। उनकी भूख पहले म बढ गयी जिसके कारण उनका स्वास्थ्य पहले से काफी अच्छा हो गया।

13 काग्रेस सस्थापक ह्यूम से भेट

उन्ही समय जब मुशीराम लाहौर म अपन वकालत के अध्ययन को छोडकर आय समाज के समासद के रूप म अपना जावन प्रारम्भ कर चुके थे। काग्रेस के सस्थापक मिस्टर ह्यूम लाहौर की यात्रा पर आय। मिस्टर ह्यूम की यह यात्रा काग्रस की स्थापना को लेकर था। काग्रस का जन्म तब तक हो चुका था। काग्रेस आदोलन का उद्देश्य ही अग्रेजी शासन की सामाजिक भूमिका को और सुदृढ करना और भारतीय जन मानस म सरकार समथक पदा करना था।

मुशीराम को सर ह्यूम के आगमन का यह उद्देश्य बहुत अच्छी तरह मालूम था। सर ह्यूम उन दिनो बहुत श्रेष्ठ व्यक्तियो म गिन जाते थे। वह पढे लिखे भारतीय व्यक्तियो से ही सम्पक रखना पस द करते थे। उस समय के लगभग सभी व्यक्ति सर ह्यूम को स देह की दृष्टि से देखते थे। शिक्षित वग म यह धारणा अच्छी तरह बठ गयी थी कि सर ह्यूम ब्रिटिश शासन के गुप्तचर के रूप म अग्रजी शासन के हितषी हैं। जो भारतीय समाज के लोगो को राजनीतिक उद्देश्यो के तहत फसाने के लिए आये है।

सर ह्यूम न लाहौर मे काग्रसी उद्देश्यो को लेकर आय समाज के स्तम्भ लाला साईदास से सम्पक स्थापित किया था। मुशीराम उस समय लाला साईदास के सम्पक न थे अत उन्हे भी मिस्टर ह्यूम के काय कलापो का पूरी जानकारी थी।

28 दिसम्बर, सन् 1888 ई० की घटना है पडित गुरुदत्त जा लाला बालकराम को साथ लिये हुए मुशीराम के घर आये जहा तरह तरह की बातें हुइ। इसके बाद तीनो व्यक्ति अनारकली बाजार की

दुग्ध पान करने गये। जहां लाला देवराज का घर भी था।
पंजाब मे उस समय तक इंडियन नेशनल कांग्रेस की स्थापना हो पाइ थी, अभी बात चीत ही चल रही थी। या तो कांग्रेस स्थापना ई क्सर बाकी भी नहीं थी। कारण लाहौर मे पढ़े लिखे लोगों मे लोगो की सख्या अधिक थी जो अंग्रेज सरकार के साथ सहयोग भावना रखना पसन्द करते थे।
लाहौर के आर्य समाजी नेता कांग्रेस पार्टी को केवल एक सरकार थित आंदोलन के रूप मे ही देखते थे जिसका काम सरकार का थन करना था। वह भी कानून की दृष्टि के अन्तर्गत ही।
पंडित गुरुदत्त का मुंशीराम पर अत्यधिक प्रभाव था। इस कारण लोग कांग्रेस के बारे मे कोई अच्छी भावना नहीं रखते थे। मुंशीराम बालकराम जैसे अन्य आर्य समाज के नेता भी पंडित गुरुदत्त के ाव मे कांग्रेस को एक सरकार समर्थित दल समझने लगे। मुंशीराम समय कांग्रेस आंदोलन की अपेक्षा आर्य समाज की ओर अधिक कने लगे व आर्य समाज मे ही सक्रिय रूप से कार्य करने लगे।
मुंशीराम के जीवन मे यह स्थिति कितनी महत्त्वपूर्ण थी, यह वह उस समय नहीं समझ पाये। यदि वह उस समय कांग्रेस मे चले गये ते तो आज उनका क्या रूप होता। इसकी कल्पना नहीं की जा सकता है। यो तो कुछ समय मुंशीराम कांग्रेस मे आये भी पर तब भी ह एक समाज सुधारक का भूमिका ही अदा कर रहे थे।
मुंशीराम की वकालत की पढाई छोडकर आर्य समाज मे सक्रिय ाने की खबर नानक चन्द को लग गयी थी। इससे नानक चन्द का मन बहुत दुःखी हुआ। अब भी उनके मन मे यह क्षीण आशा थी कि वह मुंशीराम को समझा बुझा कर रास्ते पर ले आयेंगे। उन दिनो मुंशीराम छुट्टियो मे घर आये थे। उस दिन निजला एकादशी का व्रत था। नानक चन्द बहुत कट्टर धार्मिक विचारो के थे, इस कारण उन्होने व्रत रखा था। उन्होंने मुंशीराम को एकादशी के अवसर पर दान का संकल्प लेने को कहा, परन्तु मुंशीराम तो इन धार्मिक मान्यताओं के कट्टर विरोधी थे। उन्होंने पिता से स्पष्ट इनकार कर दिया। इस पर

पिता बहुत दुखी हुए जिसकी मुशीराम ने उस समय कोई परवाह नहीं की।

छुट्टियां समाप्त होने के बाद जब मुशीराम घर से चलने लगे तो पिता ने अपने पुत्र से घर से जाते समय भगवान को नमस्कार करने को कहा। पर मुशीराम ने भगवान को प्रणाम करने से स्पष्ट इनकार कर दिया क्योंकि वे मूर्ति पूजा के कट्टर विरोधी थे। पिता को मुशीराम की इन सभी हरकतो से बहुत दुख पहुचा। परन्तु जवान विवाहित पुत्र से अब क्या कहा जा सकता था।

घर से चलते समय नानक चन्द ने हमेशा की तरह खर्चे के लिए रुपये दिये जिसे मुशीराम ने उस समय तो चुपचाप ले लिये पर बाद में पिता के एक मित्र को रुपये लौटाते हुए यह कहा कि, "जब मैं पिता के विचारो के अनुसार नही चल सकता व उन्हे प्रसन्न नहीं रख सकता, तो मैं उनकी आर्थिक सहायता ही क्यो लू।"

नानक चन्द को मुशीराम की इस धृष्टता से सबसे ज्यादा दुख पहुचा। पर आखिर बाप का दिल था। जानते थे कि बिना रुपये के मुशीराम का गुजारा कैसे होगा? इसलिए उन्होने एक अन्य व्यक्ति से मुशीराम को लाहौर में रुपये भिजवा दिये। मुशीराम ने उस समय चुपचाप रुपये रख लिये।

पिता के इस तरह के आर्थिक मतभेदो के बावजूद भी मुशीराम अपने पिता से बहुत स्नेह रखते थे व बहुत इज्जत करते थे।

लाहौर लौटकर मुशीराम ने पुनः जोर शोर से आर्य समाज के कार्यकलापों में भाग लेना शुरू कर दिया। लाहौर आर्य समाज उन दिनों उत्साही नवयुवकों का केन्द्र था। मुशीराम बड़े जोर शोर से आर्य समाज के कार्यों में जुट गये।

लाला नानक चन्द अपनी सरकारी नौकरी से अवकाश प्राप्त करने की आयु पर आ चुके थे। उनके दो पुत्र सम्मानपूर्वक पुलिस की नौकरियां कर रहे थे। बाकी बचे मुशीराम ही नौकरी छोड़कर वकालत करने लगे थे। और धीरे धीरे वकालत छोड़कर आर्य समाज के सक्रिय नेता बन गये थे।

लाला नानक चन्द रिटायर होकर अपने पतृक घर तलवन में रहने लगे थे। अब उनको पेंशन मिलने लगा थी। इसलिए अपना गाँव तो वह आनाना से चला हो सकते थे।

पर नानक चन्द के भाग्य में आराम नहीं लिखा था। कुछ दिन अवकाश प्राप्त कर रहते समय ज्यादा दिन चैन से नहीं बिता पाये।

मुंशीराम पिता की बीमारी सुनकर तलवन आये। पिता की यह दशा देखकर उन्हें बहुत दुःख हुआ। उन्होंने पिता का जी जान से सेवा तथा इलाज कराया। लाहौर से समय मिलते ही वह तलवन चले आते करते थे। पुत्र की भक्ति भावना और सेवा से नानक चन्द के मन को बहुत सन्तोष मिलता। धीरे धीरे मुंशीराम के प्रभाव से नानक चन्द को भी आर्य समाज के ऊपर श्रद्धा और विश्वास हो गया। वह धीरे धीरे आर्य समाज के सिद्धांतों को समझने लगे। उनको भी अब आर्य समाज से अपार स्नेह हो गया था।

मुंशीराम उस समय एक साथ कई काम देखते थे। आर्य समाज के कार्यों के अलावा जालंधर में इनकी वकालत, वकालत की परीक्षा की तैयारी के साथ साथ आर्य समाज के सार्वजनिक अधिवेशन भी चलते रहते थे। इन कारणों से जहाँ उनका सामाजिक जीवन व्यस्त था। वहाँ उनके पिता नानक चन्द अपने घर तलवन पर बीमारी भोग रहे थे जहाँ सप्ताह में एक बार जाना पड़ता था।

पहले आर्य समाज का शास्त्रार्थ सम्बन्धी कार्य लाहौर में ही सम्पन्न होता था, जिस कारण जालंधर आर्य समाज वालों को कुछ असुविधा होती थी। मुंशीराम ने जालंधर आर्य समाज सभा को भी स्वतन्त्र कर लिया था। व्याख्यान आदि देने का काम मुंशीराम स्वयं करते। उन्होंने संस्कृत जानने वाले पंडितों की भी व्यवस्था कर ली थी, जो समय पड़ने पर विरोधियों का सामना करने को तैयार रहते थे।

पिता नानक चन्द का अर्धांग फिर ठीक नहीं हुआ और एक दिन इस रोग के कारण नानक चन्द का देहान्त हो गया। पिता की मृत्यु से जहाँ मुंशीराम दुःखी थे। उस अवस्था में भी जाति बिरादरी और मुंशीराम के बीच वाद विवाद की स्थिति उत्पन्न हो गयी। जाति-

बिरादरी वाले और मुशीराम के दोनो बड भाइ नानक चन्द का अंतिम सम्कार पौराणिक रीति स करना चाहत थे, वही मुशीराम वदिक रीति से सस्कार करन पर उतारू थे। काफी वाद विवाद के बाद जात मुशीराम की हुई और उ होन वदिक रीति से ही अपन पिता नानक चन्द का अन्तिम सस्कार किया।

अपनी इस जिद्द का नतीजा उन्हें जल्दी ही भुगतना पडा। उनके पिता नानक चन्द का साया उसके सिर स उठ हा चुका था। जालधर शहर के लोग नानक चन्द के जीवित रहते यह विश्वास करत थ कि नानक चन्द मुशीराम को अपने लाड प्यार और दबाव म सनातन धम मे वापस ले आयेंगे। इस कारण मुशीराम का विरोध नही हुआ था।

पर पिता के निधन क बाद मुशीराम की जाति म हा उनका तीव्र विरोध होन लगा। पौराणिक पडितो ने और मूर्ति-पूजा क समथको न मुशोराम को शास्त्राथ क लिए ललकारा।

मुशीराम न दृढतापूवक शास्त्राथ किया और अपन विरोधियो को हर जिज्ञासा का जवाब दिया। पर तु इसके बावजूद विरोधी शान्त नही हुए और उन्होन इसक बावजूद बिरादरी की पचायत बुला कर मुशोराम को जाति बहिष्कार करन की आज्ञा दी।

मुशीराम इस जाति बहिष्कार की धमकी स डरन वाले नही थ। लाला देशराज ने इस समय उनका पूरी तरह साथ दिया और विरोधियो को धमका दिया कि वह मुशीराम को जाति से बाहर करके दख लें वह उन सबके ढोगी जीवन की अच्छी तरह पोल खोल डालेंगे।

विरोधी मुशीराम क अडिग विश्वास और दढ निश्चय को देखकर घबरा गय। उनकी बिरादरी की पचायत के प्रमुख व्यक्ति उस दिन बिरादरी की पचायत म आय ही नही बल्कि उस दिन जालधर शहर क बाहर ही चले गये। शेष बचे व्यक्ति अकेले क्या करते। इसलिए वह भी निराश होकर अपन अपन घर मे चले आय। इस प्रकार मुशीराम को जाति से बाहर निकालने की धमकी झूठी पड गयी।

इस घटना स मुशीराम की हिम्मत और खुल गयी। अब वह और मलकर आय समाज के काय करने लगे।

14 आर्य समाज मे कार्य

दशहरे के शुभ अवसर पर उन दिनो ईसाई पादरी अपना धर्म का काय प्रारम्भ करते और भोली गरीब जनता का लालच देकर ईसाई बना डालते।

मुंशीराम के कान म जब यह बात आई कि उन्होने उसी समय जालधर और अ य स्थाना पर आय समाज के अधिवेशनो का आयोजन किया। जिसम भोली भाली जनता को पादरियो द्वारा ईसामसीह के झूठे प्रचार की निंदा की गयी और झूठे प्रलोभन देकर ईसाई बनाने के काय की बहुत जबरदस्त निंदा की गयी। जिसका नतीजा यह हुआ कि ईसाई धम के प्रचारको का प्रचार सफल नही हो पाया।

जालधर मे मुंशीराम और लाला देवराज जी न आय समाज के काम को आगे बढान के लिएऔर आय समाज के लिए धन जुटान के लिए आटा और रद्दी इक्टठा करने की योजना बनाई। जिसम वह हर परिवार से कहते, अपन घर मे एक घडा रख ले जिसम राज भोजन बनान से पूर्व अपनी इच्छानुसार आटा डाल दें। इसी तरह आय समाज के सभा सभासदो, सदस्यो स यह अपील की गयी कि वे अपने घर के रद्दी कागज या अखबार न फेंके। आय समाज का चपरासी हर घर से रद्दी कागज इकट्ठे कर लाता और इन रद्दी अखबारो को बेचकर उस धन को आर्य समाज कोष म इकट्ठा कर लिया जाता। प्रतिदिन इकट्ठे हुए आटे को भी चपरासी ले आता और उसे भी बेचकर धन इकट्ठा कर कोष म जमा कर दिया जाता। यह योजना काफी सफल सिद्ध हुई जिसे आगे चलकर दयानद एग्लो वदिक कालेज वालो ने भी अपनाया और एक बडा कोष इक्ट्ठा कर लिया।

मुंशीराम जी आय नेता के अलावा एक सफल वकील भी सिद्ध

हुए। उनकी वाक्चातुरी तर्क-वितर्क करने की क्षमता भी प्रशंसनीय थी। अपने मुकदमों में वह बड़ी मेहनत और लगन से कार्य करते थे। इस कारण उनकी वकालत अच्छी तरह चलने लगी। उन्हीं दिनों एक सरदार को एक मुकदमे के लिए किसी योग्य वकील की आवश्यकता थी। अतः योग्य वकील की तलाश में उसने अदालत में कई वकील लोगों को बहस करते हुए देखा। इन सारे वकीलों में बहस के आधार पर उसे मुंशीराम ही योग्य वकील नजर आये।

उस सरदार ने अपने सारे मुकदमों की बागडोर मुंशीराम को सौंप दी।

इस तरह मुंशीराम की दिन दुगुनी, रात चौगुनी उन्नति हो रही थी। उस समय जालन्धर में बीबी साहब फौजदार के जाने-माने वकील थे। उन्होंने मुंशीराम को उनकी योग्यता से प्रसन्न होकर अपना एक सहायक बना लिया। इस कारण शीघ्र ही मुंशीराम जालंधर के नामी वकील बन गए थे।

उन दिनों ही मुंशीराम की वकालत की परीक्षा भी नजदीक थी। इसके अलावा लाहौर आर्य समाज उत्सव की तैयारियां भी पूरे जोरों पर चल रही थी। आर्य समाज का उत्सव बड़ी शान से सम्पन्न हुआ। उसी समय किसी अन्य कारण परीक्षा की तिथि दो मास आगे के लिए स्थगित हो गयी थी। इस बीच मुंशीराम ने जालंधर में आर्य समाज का वार्षिक उत्सव भी शानदार तरीके से सम्पन्न करा दिया।

तत्पश्चात वे कानून की परीक्षा देने लाहौर गये और परीक्षा में शामिल हुए। इस बार क्योंकि पूरी लगन से तैयारी की थी इस कारण परिणाम भी बहुत अच्छा निकला। मुंशीराम ने आखिर वकालत की परीक्षा भी पास की। पर इस परीक्षा में उत्तीर्ण होने का सुख नानक चंद के भाग्य में नहीं था। जिनकी बहुत इच्छा थी कि मुंशीराम किसी प्रतिष्ठित पद पर पहुंच जाए। अब मुंशीराम को भी पढ़ाई लिखाई और परीक्षा के चक्कर से मुक्ति मिल गयी थी।

मुंशीराम का पारिवारिक जीवन भी बड़ी ही शांति से गुजर रहा था। उनकी पत्नी शिवदेवी बड़ी ही पति परायण और सती सा वी

स्त्री थी। उन्होंने कभी अपने पति से पूर्व भोजन नहीं किया था। एक आदर्श भारतीय नारी की तरह वह पति सेवा और पति भक्ति में अपना और अपने परिवार का कल्याण समझती थी। वह रोज नियमित रूप से पति के चरण दबाती और उनकी सेवा में कभी मुंह नहीं मोड़ती थी। यौवनावस्था में मुंशीराम कुसंगतिवश शराब, मांस और धूम्रपान तीनों में ही लिप्त थे। उन्होंने न कभी पति की आलोचना की और न ही इन चीजों को लेकर कभी कोई कलह ही की।

शिवदेवी हमेशा पति द्वारा पढ़े गए अंग्रेजी उपन्यासों के प्रभाव में आयी। रोमांस की भावनाओं को ना हमेशा उचित व सात्विक रास्ता दिखलाया। उन्होंने धीरे धीरे मुंशीराम से बिना किसी कलह के सारी गंदी आदतें छुड़वा दीं। इनसे उनकी ही बदौलत मुंशीराम के मन में स्त्री जाति के प्रति सम्मान की व दया की भावना उत्पन्न हुई। उन्होंने हमेशा अपने पति के समक्ष एक आदर्श भारतीय नारी का चरित्र प्रस्तुत किया। जिससे मुंशीराम अत्यधिक प्रसन्न हुए और आगे चलकर जिसकी बदौलत उन्होंने भारतीय नारी के प्रति बहुत बड़ा उद्धार का गुरुतर भार उठाया और उसे पूरा भी किया।

उस समय लड़कियों को पढ़ाया लिखाया जाना आवश्यक नहीं था। जिस कारण शिवदेवी भी ज्यादा पढ़ी लिखी नहीं थी। मुंशीराम ने स्वयं उन्हें हिन्दी पढ़ना और लिखना सिखाया। उन्होंने अपनी पत्नी को परदा प्रथा से भी मुक्ति दिलवाई और शिवदेवी को एक अच्छी गृहिणी बनने में पूरी मदद दी। जब तक नानकचन्द जीवित रहे शिवदेवी ने उनकी भरपूर सेवा की। नानक चंद अपनी कुलवधू से बहुत प्रसन्न थे। मुंशीराम जहां भी जाते, अपने बच्चों को हमेशा अपने साथ ले जाते।

जालंधर में जब उनकी वकालत चलने लगी उन्होंने अपने कमाये धन से एक सुन्दर कोठी बनवाई। वह उसी में रहने लगे। मुंशीराम के चार संतानें हुईं जिनमें दो लड़के थे और दो लड़कियां थीं। इनकी पुत्रियों के नाम वेदकुमारी और अमृतकला था और पुत्रों के नाम हरिश्चन्द्र और इन्द्रजी था।

मुंशीराम ने अपने चारों बच्चों को समुचित शिक्षा देने का निश्चय किया। उनकी दोनों लडकियां लडकों से उम्र में बड़ी थीं इस कारण उन्हें उनकी शिक्षा की चिन्ता हुई। उन दिनों कुलीन हिन्दू परिवारों में लडकियों को पढने का प्रचलन नहीं था। इस कारण लडकियों के लिए कोई पाठशाला नहीं थी।

इस कारण मुंशीराम ने क्रिश्चियन मिशन स्कूल में दोनों लडकियों को भरती करवा दिया। एक दिन एक बेटी स्कूल से पढकर घर आई और मां को उत्साह से बतलाने लगी कि उसने आज एक नया गीत सीखा है, पूछने पर वह सस्वर में गाने लगी एक बार ईसा ईसा बोल तेरा क्या लगेगा मोल, ईसा मेरा राम रमैया ईसा मेरा कृष्ण कन्हैया ।"

मुंशीराम अपनी बेटी के मुंह से इस तरह का गीत सीख कर हतप्रभ रह गये। ईसाई स्कूल में इस तरह का शिक्षण कराया जायगा। इसकी उन्हें आशा भी नहीं थी। ईसाई स्कूल शिक्षा की आड़ में धर्म का प्रचार कर रहे हैं। उसी समय उन्होंने वहां से अपनी बेटियों को हटाने का निश्चय कर लिया। जैसे ही लडकी वेदवती को मुंशीराम ने यह निश्चय बतलाया, उसने तुरन्त कहा, 'मेरे लिए कोई दूसरा स्कूल है। जहां मैं पढ सकूं?' मुंशीराम उस समय निरुत्तर हो गये। पर जल्दी ही उन्होंने कन्या पाठशाला खोल डालने का दृढ निश्चय कर डाला। उन्होंने कन्या पाठशाला खोलने के लिए जनता और वैदिक प्रेमियों से नम्र निवेदन किया। जनता ने भी उनके इस विचार का स्वागत किया और कन्या पाठशाला के लिए रुपया आने लगा। मुंशीराम के अथक प्रयासों से सन 1890 ई० में जालंधर कन्या महाविद्यालय की स्थापना हुई।

मुंशीराम पहले व्यक्ति थे जिन्होंने भारत में स्त्री शिक्षा पर सबसे पहले ध्यान दिया और इस विषय में कोई ठोस कदम उठाया। उन्होंने ही सारे भारत में धीरे धीरे कन्या विद्यालयों की स्थापना पर जोर दिया। वे ही स्त्री शिक्षा के जन्मदाता बने। आज भारत में उन्हीं के दिखाये रास्ते पर चलते हुए आर्य कन्या पाठशालाओं की स्थापना हुई।

जो आज भी उसी तरह चल रही हैं।

मुंशीराम का अपनी पत्नी से अटूट संबंध था। उन्होंने कभी अपनी पत्नी से अलग होने का विचार नहीं किया था। उनका विश्वास था कि वैदिक संस्कारों के अनुसार पति पत्नी का संबंध अटूट होता है। उनका पारिवारिक जीवन बहुत ज्यादा सुखी और सम्पन्न था।

किन्तु जीवन तो क्षण भंगुर है, न कोई साथ आता है और न ही साथ जाता है। सब ईश्वर की इच्छा पर निर्भर करता है और उसके आगे किसी की नहीं चलती।

मुंशीराम को धर्मशाला के आर्य समाज ने अपने सालाना जलसे में निमंत्रित किया था। उन्होंने सपरिवार धर्मशाला जाने का निश्चय किया था। पर ईश्वर का कुछ और ही मंजूर था।

शिवदेवी उन दिनों कुछ अस्वस्थ चल रही थी। उन्हें बुखार आ रहा था और भी छोटी मोटी बीमारियां थी। किन्तु बीमारियां कुछ ज्यादा खतरनाक नहीं थी न ही कोई घबराने जैसी बात थी।

अचानक शिवदेवी की तबियत ज्यादा घबरा गयी। उन्होंने डाक्टर से अपनी परीक्षा करवाई। मुंशीराम और डॉक्टर बाहर बातचीत कर रहे थे कि अचानक शिवदेवी ने घबरा कर मुंशीराम को अपने पास बुलवाया।

मुंशीराम तत्काल कमरे में आ गये और उन्होंने झुककर पत्नी का हाथ पकड़ा व उनकी नाड़ी देखने लगे। शिवदेवी की दशा अचानक सोचनीय हो गयी।

शिवदेवी के ओंठ कुछ कहने को कांप रहे थे वह कुछ बोलना चाहती थीं। तभी एक बार 'ओउम' का उच्चारण हुआ तब तक परिवार के सब व्यक्ति उनके आस पास इकट्ठे हो गये। शिवदेवी की माता ने उनका सिर अपनी गोद में ले लिया, शिवदेवी ने एक पथराई दृष्टि से पति मुंशीराम को देखा, और माता की गोद में ही लुढ़क गयीं। सन् 1991 ई० में मुंशीराम की पत्नी भी अल्पायु में संग छोड़ कर चली गयीं। मुंशीराम ने वैदिक रीति से शिवदेवी का अंतिम संस्कार कर दिया।

दूसरे दिन जब वह दुखी मन से अपनी पत्नी का सामान बटोर रहे थे तभी उनकी पुत्री वेदकुमारी ने मा के कलमदान के नीचे रखा कागज निकाल कर मुशीराम को सौंपा।

मुशीराम ने उस कागज को खोला, वह उनकी पत्नी का उनके नाम लिखा पत्र था।

पत्र मे लिखा था— 'बाबूजी अब मैं चली। मेरे अपराध क्षमा करना आपको मुझसे अधिक रूपवती, बुद्धिमती सेविका मिल जायगी। परन्तु इन वचनो को कभी मत भूलना। मेरा अंतिम प्रणाम स्वीकार करो।"

मुशीराम का हृदय फट गया। उन्होंने हृदय से अपनी पत्नी का आज्ञा स्वीकार कर ली। आजीवन उसका पालन किया। बालको के पालन पोषण का सारा दायित्व मुशीराम के बड़े भाई आत्माराम और उनकी पत्नी ने ले लिया।

अपनी पत्नी की मृत्यु के समय मुशीराम मात्र 35 साल के थे। भरपूर जवानी ऐश्वर्य, धनधान्य मान-सम्मान होने के बावजूद फिर मुशीराम ने विवाह नही किया।

महर्षि दयानन्द के आदेश और उपदेशो और वैदिक धर्मों के आदर्शों का ही यह फल था कि मुशीराम ने आजीवन एक पत्नीव्रत का पालन किया। जबकि उनके मित्र सबंधी हितचिंतक परिशराजन दूसरे विवाह की सलाह दे रहे थे। कई प्रकार के प्रलोभन सामने आये परंतु सब निष्फल ही सिद्ध हुए।

वास्तव मे शिवदेवी के अंतिम संदेश ने मुशीराम को बुरी तरह झकझोर दिया था। जिसके कारण उनमे पौरुष के साथ मातृभाव भी जगा दिया था। जिसके बल पर कर्मवीर की भांति जीवन के महान उद्देश्यो से वे जूझ गये।

मुशीराम के समय धर्मान्धता और पुराणपंथी विचारधारा बहुत जोरो पर थी। एक सच्चे आर्य समाजी के रूप मे अपने विचारो को सबसे पहले अपने घर परिवार और अपने जीवन मे पूरी तरह अपना

लिया । उन्होने समाज मे एक आदर्श प्रस्तुत कर अपने परिवार मे अतिम सस्कार, विवाह आदि जाति पाति के बधन तोड कर वैदिक रीति से सम्पन्न किये । इस प्रकार उस समय मे भी आदश और साहस का परिचय देकर अपने सिद्धान्तो का पूरा परिचय दिया ।

मुन्शीराम ने इस प्रकार और अधिक जोश और खरोश से सामाजिक आदोलनो मे भाग लेना जारी रखा । इसके अलावा जालधर शहर मे अपनी वकालत भी करते रहे । जहा वे अपने क्षेत्र के प्रमुख और प्रसिद्ध वकील थे । जहा सन् 1898 तक मुशीराम जोर शोर से वकालत करते रहे ।

15 आर्य समाज के प्रधान

मुंशीराम ने आर्य समाज के सामाजिक उद्देश्यों को और अधिक सफल बनाने के लिए एक साप्ताहिक पत्र निकालने की योजना बनाई। इस संबंध में आर्य समाज के और नेताओं के साथ विचार विमर्श कर सन् 1890 ई० में उन्होंने अपना समाचार पत्र निकालना प्रारंभ कर दिया।

इस समाचार पत्र का नाम 'सद्धर्म प्रचारक' था। पंजाब प्रांत में इस समय उर्दू भाषा का प्रचार था। इस कारण इस समाचार पत्र की भाषा भी उर्दू ही थी।

मुंशीराम ने इस समाचार पत्र को सार्वजनिक बनाने के लिए उसमें हिस्सेदारों को भी सम्मिलित किया। उन्होंने पच्चीस-पच्चीस रुपये के कई हिस्सेदार आमंत्रित किये। उनके आह्वान पर कई एक हिस्सेदार मिल गये। प्रेस का प्रबंध भी हो गया। मुंशीराम और लाला देवराज इस पत्र के संपादक बने। कई साल तक यह पत्र चलता रहा पर व्यावसायिक दृष्टि से कभी लाभदायक साबित नहीं हुआ। अंत में मुंशीराम ने सारे हिस्सेदारों का रुपया वापिस लौटा दिया। प्रेस और पत्र की सारी जिम्मेदारी अपने ऊपर ले ली और पत्र को जोर शोर से चलाने लगे थे।

समाचार पत्र की लिपि उर्दू अवश्य थी, परन्तु पत्र की भाषा धीरे धीरे उर्दू लिपि में ही हिंदी बना दी गई व उसमें संस्कृत के शब्द भी शामिल कर लिए जाते। अनेक आर्य समाजी नेताओं ने इस बात का विरोध भी किया। किंतु पत्र की बढ़ती हुई मांग के कारण उनका विरोध ठंडा पड़ गया। पत्र का काम सुचारु रूप से चलने लगा। पत्र की भाषा को आम लोग आर्य समाजी उर्दू भी कहते थे।

इस समाचार पत्र का उद्देश्य आर्य संस्कृति सभ्यता और हिंदी भाषा का प्रचार करके देश को जागरूक करना था। पत्र के माध्यम से मुंशीराम ने आर्य समाज के सिद्धांतों का विधिवत पालन किया।

बाद में जनता की बढ़ती माग पर 'सद्धर्म प्रचारक' का हिंदी देवनागरी संस्करण भी प्रकाशित होने लगा। जालंधर में मुंशीराम द्वारा आर्य कन्या पाठशाला और महाविद्यालय भी दिन दुगुनी रात चौगुनी उन्नति कर रहे थे। इस तरह समाचार पत्र व अन्य माध्यमों से आर्य समाज के सिद्धांतों को आम जनता तक पहुंचाया।

मुंशीराम ने जब जालंधर शहर में स्त्री जगत को शिक्षित करने के लिए आर्य कन्या महाविद्यालय की शुरुआत की अनेकों असहिष्णु और प्राचीन प्रथाओं को मानने वाले समाज के व्यक्तियों ने उनका घोर विरोध किया। किंतु लाला देवराज और मुंशीराम किसी प्रकार भी घबराये नहीं और डटकर उन्होंने अपने विरोधियों का मुकाबला किया। मुंशीराम ने घर घर जाकर अपने उद्देश्यों और प्रचार कार्य को समाज के सामने प्रस्तुत किया और शीघ्र ही उनके कार्यों को जनता से समर्थन प्राप्त होने लगा।

मुंशीराम ऋषि दयानंद के सिद्धांतों के कट्टर समर्थक थे। महर्षि दयानन्द सरस्वती भारत को इन संकीर्ण मान्यताओं को तोड़कर धर्मांध और अव्यवहारिक मान्यताओं को समाप्त कर पुनः आर्य संस्कृति की ओर ले जाना चाहते थे। वे व्यक्तियों में समानता की भावना और पवित्रता पर विश्वास करते थे व स्त्री-शिक्षा छुआछूत को समाप्त कर देश की एक भाषा एक आचार विचार कायम करना चाहते थे। वह इस तरह लोगों में राष्ट्र प्रेम और स्वतंत्रता की भावना कायम करना चाहते थे। चरित्र की शुद्धता मन की एकाग्रता और वैदिक धर्म की मान्यता इसके मूल मंत्र थे। मुंशीराम ने तो ऋषि दयानंद के सिद्धांतों का अक्षरशः पालन करने का दृढ़ निश्चय कर डाला था।

सद्धर्म प्रचारक पत्र द्वारा जहां लाला देवराज और मुंशीराम ने आर्य सिद्धांतों का प्रतिपादन किया वहीं हिन्दी को और देवनागरी लिपि को प्रोत्साहित करके हिंदी को भारत की राष्ट्र भाषा बनाने का सदप्रयास

भी किया। मु शीराम न केवल समाचार पत्र निकालकर ही सन्तोष नही किया। बल्कि उन्होंने आय समाज का लगभग सारा प्रचार अपने हाथ म ले लिया। जालधर व उसके आसपास कोई ऐसा शहर, गाव या कस्बा नही होगा, जहां मुन्शीराम आय समाज के प्रचार के लिए गये न गये हो व जहा उन्होंने वैदिक म कृति की नीव न डाली हो।

उनके साथ उनका एक महान सहायक चिरजीलाल पहलवान हमेशा साथ रहता था। चिरजीलाल पहलवान की याद आते ही एक मनोरजन घटना का स्मरण हो आता है। जिसकी बदौलत उनका व चिरजीलाल पहलवान का मल मिलाप हुआ।

चिरजीलाल पहलवान लुधियाना का रहने वाला एक सीधा सादा व्यक्ति था। पर इसके साथ वह आर्य समाज का कट्टर समथक और प्रचारक था। इसी कारण उसे जानने वाले उसे पहलवान कहते। चिरजीलाल पहलवान अपनी धुन के पक्के व्यक्ति थ। वह अपने आय समाज के प्रचार की धुन मे इतने उत्साहित रहते थ कि वे सावजनिक स्थानो पर रास्तो म खड होकर धम का प्रचार करते थ। उनके इस प्रकार के प्रचार से उस इलाके के कट्टर पथी ब्राह्मण उनसे बहुत अप्रस न थ। एक दिन चिरजीलाल रास्ते म खड रहकर वेदो का खण्डन कर रहे थ कि तभी एक ब्राह्मण ने आकर उनसे तर्क करने को कहा और पौराणिक कथाओ व वर्ण व्यवस्था के अनुसार कर्म और धम का सही मानने की बात कही।

चिरजीलाल न उस ब्राह्मण की बात का खडन किया और पौराणिक व्याख्यानो व वर्ण व्यवस्था का पूरी तरह खडन किया। इस पर ब्राह्मण ने चिरजीलाल पहलवान को ब्राह्मण के कम करने को ललकारा और अपने जजमान से उन्हे दान लेने को कहा। चिरजीलाल भी कुछ कम नही थ उन्होने तुरन्त दान स्वीकार कर लिया। जिस पर वह ब्राह्मण बहुत कुपित हो गया। उसका कहना था कि दान लेने का अधिकार सिर्फ ब्राह्मणो का है, अन्य किसी भी जाति का व्यक्ति दान नही ले सकता है। उस ब्राह्मण के अनुसार चिरजीलाल ने दान लेकर ब्राह्मणो के जन्मजात दान लेने के अधिकार पर कुठाराघात किया है जो कि

एक सामाजिक अधिकार है।

उस ब्राह्मण ने चिरजीलाल द्वारा दान लेने की बात अन्य ब्राह्मणों से की। जिस पर सब ब्राह्मणो ने मिलकर अपने दान लेने के अधिकार को सुरक्षित रखने के लिए न्यायालय मे मुकदमा दायर कर दिया। न्यायालय ने भी ब्राह्मणो की बात का समर्थन किया और चिरजीलाल को अपराधी घोषित कर दिया। चिरजीलाल को इस अपराध की सजा भी सुना दी गई।

मुंशीराम को जब चिरजीलाल से इस सारे मामले का पता चला तो उन्होने तत्काल इस मामले की अपील न्यायालय मे करने का फैसला किया। उन दिनो लुधियाना की अपील जालधर मे हुआ करती थी। मुंशीराम ने स्वय सारे मामले की अच्छी तरह छानबीन की और अपील जालधर मे कर दी। उन्होने खुद ही मामले की पैरवी की और चिरजीलाल को बरी करा लिया। इससे चिरजीलाल मुंशीलाल का पक्का भक्त बन गया। उसने लुधियाना शहर ही छोड दिया। वह जालधर आकर मुंशीराम के पास ही रहने लगा। कई सालो तक उसने मुंशीराम के साथ आर्य समाज का प्रचार किया।

पर मुंशीराम केवल आर्य समाज के प्रचार कार्य से ही सतुष्ट नही होते थे, वह आर्य समाज के अन्दरूनी मामलो और शुद्धता व सच्चाई पर भी यकीन करते थे। ऐसा ही दूसरो से चाहते थे। उनका यह विचार था कि आर्य समाज की व्यवस्था सगठन और उसके कार्यकर्ता सच्चे और ईमानदार व्यक्ति होने चाहिए। इस कारण वह वरिष्ठ से वरिष्ठ पदाधिकारियो की भी आलोचना करने से जरा भी नही घबराते थे।

पण्डित गुरुदत्त और शहीद लेखराम से मुंशीराम की काफी घनिष्ठ मित्रता थी। पण्डित गुरुदत्त ने उनमे स्वाध्याय की ओर अधिक रुचि विकसित की। इसी प्रकार आर्य धर्म के प्रचार मे लेखराम ने उनका पूरा पूरा साथ व सहयोग दिया। पण्डित लेखराम के साथ तो मुंशीराम ने जालधर शहर के बाहर भी पर्याप्त प्रचार किया।

इस तरह आर्य समाज के विभिन्न कार्यों और प्रचार मे अनुभव होने के कारण मुंशीराम को सन 1892 ई० मे आर्य

प्रतिनिधि सभा का प्रधान चुना गया। मुंशीराम ने अपने इस दायित्व को बखूबी निभाया। इस प्रकार आय समाज व अन्य सामाजिक जीवन म भी मु शीराम का प्रभाव बढ़ता गया। उनका सम्मान और अधिक होने लगा। अपने उच्च पद की मर्यादा के अनुकूल बनाने के लिए मु शीराम ने अपने वदिक धार्मिक ग्रथा का, ऋगवेद भाष्य, भूमिका सस्कार विधि, पच महायज्ञ विधि, आदि ग्रथो को मुंशीराम न अच्छी तरह पढा और आय सिद्धातो को अच्छी तरह समझ कर उनका पालन किया। जिस कारण वह अच्छे व्याख्याता बन गए।

इस तरह मु शीराम ने आय प्रतिनिधि सभा पजाब के प्रधान पद पर रहते हुए उस शक्तिशाली बनाया और आय समाज का प्रचार काय पूरे पजाब प्रात म किया व उसे बाहर तक भी फलाया। पजाब प्रात म उस समय मासाहार का रिवाज घर घर मे फला हुआ था। महर्षि दयान द द्वारा मास खाने का विरोध किए जाने के बावजूद बहुत से आय समाज के सभासद और पदाधिकारी अपनी निबलता के कारण मास खाना नहा छोड पाए थे। पर तु मु शीराम काफी पहल मासाहार का त्याग कर चुके थ। इस कारण उन्होने सबसे माम खाना त्यागने की प्राथना की। उ होने अपने समाचार पत्र सद्धम प्रचारक के माध्यम से व अपने भाषणो मे मास खाने के विरुद्ध प्रचार का काय किया। इससे काफी सख्या मे आय समाज के प्रचार व सभासदो ने मास खाना छोड छोड दिया। परन्तु बहुत से आय समाजी ऐसे भी थे। जो मास खाना नही छोडना चाहते थे। उ होने मुंशीराम का कडा विरोध किया, एमे लोगों का समाज मे एक काफी बडा विरोधी ग्रुप बन गया। जिसने हमेशा उनका विरोध किया। परन्तु वे ऐसे विरोधियो से घबराने वालो म से नही थे। वह अपने सिद्धातो पर डटे रहे। उ होने इन विरोधियो का डटकर मुकाबला किया। आय प्रतिनिधि सभा म अपने समथको क बल पर वह प्रधान पद पर अवश्य बने रहे।

जालधर शहर मे सन् 1989 ई० तक आय समाज के प्रचार काय और शास्त्रार्थों की बडी धूम थी। इन सारे कार्यों के पीछे मु शीराम का बडा हाथ था।

16 सनातन धर्म से टक्कर

मुंशीराम के सुपुत्र इंद्र विद्या वाचस्पति ने अपनी पुस्तक 'स्वामी श्रद्धानन्द मेरे पिता' में स्वामी जी यानी अपने पिता मुंशीराम के जीवन की एक घटना उल्लिखित की है। जिसमें उनका भगवत्कृपा पर भरोसा था इसकी पुष्टि होती है। यह घटना मुंशीराम ने स्वयं अपने बेटे को सुनाई थी।

'घटना इस प्रकार थी आर्य समाज के मुख पत्र सद्धर्म प्रचारक में सनातन धर्म सभा पंजाब के उपदेशक पण्डित गोपीनाथ के चरित्र पर एक सम्पादकीय नोट प्रकाशित हो गया। जिसमें पण्डित गोपीनाथ के चरित्र पर कीचड़ उछाला गया था।

जिस समय सद्धर्म प्रचारक में यह नोट छपा उस समय मुंशीराम जालंधर शहर में नहीं थे। सहायक सम्पादक लाला वजीर चन्द ने यह नोट लिखा था। पण्डित गोपीनाथ पर एक अंग्रेजी अखबार ने भी आक्षेप लगाया था जिस पर उन्होंने मानहानि का मुकदमा दायर कर दिया था और जीत भी लिया था। इस कारण उनका उत्साह कुछ अधिक ही बढ़ा हुआ था। सफलता के नशे में उन्होंने सद्धर्म प्रचारक पर भी मानहानि का मुकदमा दायर कर दिया।

जिस समय मुंशीराम को अदालत का सम्मन मिला, वह बीमार अवस्था में थे। दौरे से घर लौटे थे, इस कारण इस मामले की उन्हें पूरी जानकारी भी नहीं थी।

सम्मन पाकर मुंशीराम लाहौर जा पहुंचे। जहां उनके साले लाला रायजादा भगतराम वकालत करते थे। लाला रायजादा भगतराम मुंशीराम के सबसे नजदीकी प्रेमी थे। जीवन पर्यन्त दोनों ही व्यक्तियों में वैसा ही प्रेम भाव बना रहा। जब पारिवारिक सम्बन्ध कड़वे हो गये

तब भी रायजादा भगतराम मुंशीराम के सबसे नजदीक थे। सन्यास लेने की अवस्था में भी रायजादा भगतराम मुंशीराम आर्य स्वामी श्रद्धानंद के नजदीक बने रहे।

पंडित गोपीनाथ द्वारा दायर मानहानि का यह मुकदमा अपने प्रारम्भ में ही व्यक्तिगत से सामाजिक स्तर पर जा पहुंचा। यह मुकदमा आर्य समाज और सनातन धर्म का मुकदमा बन गया। पंजाब में लम्बे समय से सनातन धर्म और आर्य समाज को लेकर जो विचार संघर्ष चल रहा था, उसके प्रतिरूप ही यह मुकदमा कायम हुआ था।

जालंधर में मुकदमा प्रारम्भ हुआ। रायजादा भगतराम ने पहली पेशी के दौरान मुंशीराम से पूछा 'कोई मसाला है भी या नहीं, जिरह में क्या पूछा जाएगा?' उस समय तक मसाला कुछ पास था नहीं। पर फिर भी मुंशीराम का भगवान पर भरोसा था।

इसलिए उन्होंने रायजादा भगतराम से कहा 'मसाला तो कुछ नहीं था। इसलिए ईश्वर पर ही पक्का भरोसा है वह ही कुछ न कुछ रास्ता निकालेंगे।'

दोनों ही व्यक्ति खाली हाथ अदालत में जा पहुंचे। पण्डित गोपीनाथ को अपनी जीत पर दृढ़ विश्वास था। वे शेर की तरह छाती तान आए और अपना स्पष्ट बयान दिया। इतने में ही लंच का समय हो गया। अदालत उठने की तैयारी हो गई। रायजादा भगतराम इस्तगासे पर निगाह डाल कर देख रहे थे कि आगे किन नुक्तों पर जिरह की जाए। तभी मुंशीराम जो अपने हाथ पीछे किए बैठे हुए थे किसी ने उन्हें पीछे से कुछ कागज हाथ में थमाये, जब तक उन्होंने उन कागजों को पकड़ने का हाथ बढ़ाया। कागज पकड़ाने वाला हाथ में पुलिंदा सौंप कर गायब हो गया।

मुंशीराम बेध्यानी में हाथ में कागज पकड़े पकड़े अदालत से बाहर आ गए। वह इस बात से बहुत चिंतित थे कि बिना सबूतों के आधार पर मुकदमा कैसे लड़ा जाएगा।

बाहर आकर भगतराम के साथ विचार विमर्श कर ही रहे थे कि अचानक ही उन्हें इन कागजों का ध्यान आया। उन कागजों को देखने

पर उन्हें पता चला कि य तो वेश्याग्रो के नाम पण्डित गोपीनाथ के लिखे पत्रो का बडल था। उन पत्रो मे अनेक रहस्य भरे हुए थ, जिनका किसी को वहम भी नहीं था।

जब इस बडल को रायजादा भगतराम के सामने रखा गया तो वे चौंक पड। कहा सबूतो के लिए तरस रहे थ, यहां सबूत ही सबूत सामने थे।

उस बडल क बल पर ही पण्डित गोपीनाथ का मानहानि का मुकदमा एक ही पेशी मे समाप्त हो गया। प ण्डत गोपीनाथ की बहुत बेइज्जती हुई।

मु शीराम को इस विजय से यह पक्का विश्वास हो गया कि साच मे आच नही होती। सत्य के रक्षक परमात्मा का हाथ मनुष्य से बहुत लम्बा है।

17 गुरुकुल का जन्म

महर्षि दयानन्द सच्चे अर्थों में भारत में वैदिक संस्कृति और सच्चे अर्थों में गुरुकुल आश्रम पद्धति के समर्थक थे। महर्षि का यह दृढ़ मत था कि अच्छी शिक्षा और चरित्रवान विद्यार्थियों के निर्माण के लिए प्रत्येक विद्यार्थी को पच्चीस साल की आयु तक ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करना चाहिए। उसे पूरे समय गुरुकुल में शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए।

अनेक आर्य समाजी गुरुकुल प्रणाली के अनुसार अपने बच्चों को शिक्षा देने को तैयार तो अवश्य थे। किंतु उस समय देश में कहीं भी गुरुकुल पद्धति की शिक्षा संस्थाएं नहीं थीं। साथ ही गुरुकुल पद्धति में छोटी उम्र के ही विद्यार्थी को बचपन से ही रखा जाता है ताकि उसमें बालपन से ही धार्मिक संस्कार और आस्था जगाई जा सके। पर हर कोई अपने बच्चों को इतनी कम उम्र में गुरुकुल में नहीं भेज सकता है।

इस वजह से ऋषि दयानन्द सरस्वती के बतलाये रास्ते पर चलते हुए लाहौर व अन्य कई स्थानों पर दयानंद एंग्लो वैदिक कालेज खोले गये। इस कार्य के पीछे लाला हंसराज प्रमुख थे, जो मुंशीराम के सगे साले थे।

पर इन संस्थाओं में संस्कृत अन्य विषयों के अतिरिक्त कार्य वैदिक पद्धति पर न हो सका। इसलिए दयानन्द एंग्लो वैदिक कालेज संस्थाएं तो खुल गयीं। किंतु उनमें ऋषि दयानन्द जी द्वारा प्रतिपादित गुरुकुल प्रणाली का उद्देश्य भी पूरा नहीं हो सका।

मुन्शी को हमेशा यही चिंता रहती थी कि वेद के प्रचार का कार्य खूब चले। उन्होंने इसके लिए योग्य उपदेशक रखकर धर्म का प्रचार

काय करवाया। पडित लेखराम और स्वामी पूर्णानद इस काय के प्रमुख आधार थे। इस प्रकार चार साल तक वेद का प्रचार किया जाता रहा। पर मुशीराम केवल इतने से ही सतुष्ट नही हुए। उन्होने वदिक विद्यालय खोलने का दृढ निश्चय कर लिया। जिसमे आश्रम पद्धति से पुरानी परिपाटी से गुरु-शिष्य सबधो को पुनर्जीवित कर गुरुकुल स्थापित किया जाये। जिसम हर विद्यार्थी सयमित जीवन बिताते हुए गुरु आश्रम मे ही रहकर शिक्षा ग्रहण करे। ऋषि दयानद और अन्य प्राचीन ऋषियो के अनुसार गुरुकुल आश्रम सामाजिक बस्तिया स दूर रहने चाहिए जहा कम से कम 25 साल तक ब्रह्मचारी सादा जीवन बिता कर वदों का अध्ययन करें। विद्यार्थी भाग विलास से दूर रह, ऐश आराम तथा पाश्चात्य सस्कृति की चमक-दमक से बचकर रह व शुद्ध भारतीय जीवन दशन को अपनाए। सन् 1898 ई० तक आते आते मुशीराम ने गुरुकुल खोलन का दृढ निश्चय कर लिया।

यो तो महर्षि दयानद सरस्वती न भारतीय सस्कृति के अनेक क्षेत्रो व कतव्यो का निर्देश अपन ग्रन्था और प्रवचनो मे किया है जिनम वण आश्रम व्यवस्था, (जिनम ब्रह्मचय आश्रम, गृहस्थ आश्रम, वानप्रस्थ आश्रम और स यास आश्रम) बतलाई है। इनम ही गुरुकुल शिक्षा प्रणाली, आय भाषा आन्दोलन राजाओ का सुधार व राजनीतिक विचारो, राष्ट्रीयता व भारतीयता को प्राथमिकता दी गयी है।

मुशीराम न करीब करीब हर क्षेत्रो मे अपनी पूरी पूरी ताकत आजमायी थी। गुरुकुल शिक्षा प्रणाली का गुरुकुल स्थापित करना भी उतना आसान नही था।

एक दिन अचानक ही मुशीराम जालधर से अपने घर तलवन जब पहुचे तो सामान उनके घर पहुच गया पर वे स्वय नही पहुचे। उनक परिवारी जन जब वहा पहुचे तो मुशीराम न साफ साफ शब्दो मे कहा, हा जब तक गुरुकुल की स्थापना नही हो जाती तब तक वह अपने घर मे प्रवेश नही करेगे।

गुरुकुल की स्थापना के लिए तीस हजार रुपये की आवश्यकता थी। मुंशीराम के गुरुकुल स्थापना की बात सुनकर उनके सभी परिचित हसने और उन्हें मूर्ख ठहराने लगे। पर मुंशीराम अडिग रहे। ऋषि दयानंद ने उनकी आखें खोल दी थीं। वह आर्य वैदिक संस्कृति पर अधिक विश्वास करते थे। उनके हृदय के सारे संशय और डर दूर हो गये थे। वास्तव में मुंशीराम सत्यार्थ प्रकाश में वर्णित गुरुकुल की स्थापना कर महर्षि दयानन्द का स्मारक बनाना चाहते थे।

लगभग छह माह तक उन्होंने अपने घर में कदम नही रखा। घर घर, सड़क सड़क मांगकर उन्होंने छह मास में ही तीस हजार रुपये इकट्ठे कर लिये! जो 1899 में तो निश्चित रूप से बहुत भारी रकम थी।

गुरुकुल के लिए जब तीस हजार रुपया एकत्र हो गया तो गुरुकुल चलाने के लिए त्यागी और कर्मठ कार्यकर्ताओं की आवश्यकता पड़ी। उस समय यह प्रश्न उत्पन्न हो गया कि कहां से त्यागी और वानप्रस्थी विद्वान इकट्ठे किये जायें।

सबसे पहले मुंशीराम ने स्वयं वानप्रस्थ आश्रम में प्रवेश किया ताकि वे स्वयं सेवा करने के लिए गृहस्थ आश्रम से छुटकारा पा जायें। उनके त्याग और तप के कारण उनका नाम अब महात्मा मुंशीराम हो गया।

जालंधर के लाला शालिगराम भी जो, आजन्म व्रत लेकर पक्के आर्य समाज के सेवक थे, उन्होंने भी मुंशी राम का साथ दिया। साथ ही उनके दो मित्र—पंडित गंगा दत्त और विष्णु ने भी महात्मा मुंशीराम के साथ सहयोग करने का वचन दिया।

जब गुरुकुल आश्रम के लिए बच्चों की आवश्यकता थी। महात्मा मुंशीराम ने सबसे पहले अपने दोनों पुत्रों हरिश्चन्द्र और इन्द्र को सर्वप्रथम गुरुकुल में प्रवेश दिला दिया।

आरम्भ में गुजरावाला में इन दस-पन्द्रह बालकों को लेकर निर्माण आरम्भ हुआ। परन्तु वह स्थान गुरुकुल के अनुरूप नहीं था।

मुंशी राम व शालिगराम गुरुकुल के लिए स्थान की खोज में निकले।

गुरुकुल जैसी संस्था के लिए शांत प्राकृतिक वातावरण, प्राकृतिक सौंदर्य से भरपूर सुरम्य स्थान की आवश्यकता थी। महात्मा मुंशी राम और उनके सहयोगी पवित्र गंगा तट पर शिवालिक हिमालय की पहाड़ियों में वन हरिद्वार के समीप गंगा तट के ठीक पीछे कांगड़ी ग्राम पहुंचे।

यह जगह गुरुकुल के लिए मुंशीराम ने बहुत पसंद की। उन्होंने इस स्थान को खरीदने के लिए जमीन के मालिक की खोज की तो पता चला कि कांगड़ी ग्राम की यह जमीन सौभाग्य से बिजनौर के मुंशी अमन सिंह की थी, जो उस इलाके के जागीरदार थे। महात्मा मुंशी राम की वहां गुरुकुल बनाने की इच्छा सुनकर मुंशी अमन सिंह ने सारी जमीन गुरुकुल के लिए दान दे दी।

उस समय कांगड़ी के आसपास घना जंगल था। इस कारण हमेशा जंगली जानवरों की भरमार रहती। खूंखार जानवर, जिनमें शेर चीते बाघ और हाथी भी थे उस समय गुरुकुल के आसपास घूमते रहते, जिससे गुरुकुल में प्रारंभ में बड़ा भय छाया रहता।

महात्मा मुंशी राम अपने छब्बीस शिष्यों सहित सन 1899 ई० में इस स्थान पर आये। जहां उन्होंने निकटवर्ती जंगल को साफ कराके वहां ब्रह्मचारियों के रहने के लिए आश्रम बनाया। महात्मा मुंशीराम का यह विचार था कि अधिष्ठाता और आचार्यों का कार्य अनुभवी और वानप्रस्थी व्यक्ति ही करें। इस कारण वह गुरुकुल के प्रमुख बने। अन्य पदों के लिए भी वैसे ही व्यक्तियों की आवश्यकता थी। उस समय ऐसे व्यक्तियों का मिलना कठिन था। इसलिए उन्होंने सदाचारी सौम्य राष्ट्र और समाज की सेवा करने वाले व्यक्तियों को गुरुकुल के कार्य में लगा दिया, जो सादा जीवन व्यतीत कर गुरुकुल के उद्देश्यों को गुरुकुल के ब्रह्मचारियों तक पहुंचा सकते थे।

महात्मा मुंशी राम बड़े विचारशील और वास्तविकता को जानने समझने वाले व्यक्ति थे। उन्हें गुरुकुल में पढ़ने वालों का भविष्य

भी देखना था व वदिक शिक्षण पद्धति के साथ उन्हें समाज की आवश्यकताओं के अनुरूप भी बनाना था। इसलिए कुछ समय उपरात पाठन विधि म पाश्चात्य विज्ञान और अंग्रेजी को भी सम्मिलित कर लिया गया।

गुरुकुल की स्थापना करके मुशीराम न अनुभव किया कि गुरुकुल को उनकी नितात आवश्यकता थी क्योंकि कवल बुनियाद रखकर उसे आरम्भ कर देने मात्र से उनका उद्देश्य पूरा नहीं हुआ था। अपितु उन्हें उस सस्था को चिरस्थाई भी बनाना था। इसलिए उन्होंने वकालत का अपना व्यवसाय तो पहले ही छोड दिया था। अपना पूरा जीवन गुरुकुल के लिए अपण कर दिया।

या तो गुरुकुल का प्रबध आय प्रतिनिधि सभा के पास था। परतु अपनी विशिष्ट शिक्षण पद्धति के कारण गुरुकुल एक राष्ट्रीय सस्था क रूप म उभरकर सामन आ गया थी। वह अपने म एक विशिष्ट वदिक शिक्षा सस्था थी। जो सफलतापूवक एक पवित्र वातावरण म चल रहा थी। इस सस्था की तारीफ सुनकर अनक राष्ट्रीय नता, सामाजिक कायकर्ता और विद्वान आन लगे।

महात्मा मुन्शीराम क कनिष्ठ पुत्र इद्र विद्यावाचस्पति गुरुकुल की सस्था के बारे म वणन करते हैं। " ग्रीष्म ऋतु क प्रारभ म सायकाल हम कोई एक दजन बच्चे गुरुकुल पहुचे। जहा उदघाटन के पश्चात एक वष के अदर ही कच्ची दीवारों और टीन का छता वाले शेड बनन प्रारम्भ हो गय थ। हमार रहन का स्थान खर एव बेर के पडों से घिरा हुआ था। बीच-बीच म कहीं बिल्व के पड थे।

फ्रास के सुप्रसिद्ध लेखक सत सेम्यासरा गुरुकुल कागडी की प्रशसा करते हुए लिखते हैं, "गुरुकुल आश्रम महात्मा मुन्शीराम क घोर परिश्रम, लगन और दृढ़ निश्चय का मधुकोष है। इस सस्था न राष्ट्रीय आय शिक्षा का केन्द्र बनकर भारतीय जाति की उन्नति के विकास और समुत्थान म बहुमूल्य योगदान किया है। इस सस्था ने आय सस्कृति के ज्ञान विज्ञान क प्रचार प्रसार के साथ साथ पाश्चात्य बौद्धिक एव औद्योगिक सफलताओं का भी उपयोग किया है।

18 दूसरो की दृष्टि मे गुरुकुल

गुरुकुल की प्रशसा देश से बाहर फ्रास, जमनी, व इग्लड तक जा पहुची। इग्लैंड की गोरी सरकार तक जा पहुची। इग्लैंड के लेबर दल के नता रोनाल्ड मकडोनाल्ड, जो वाद मे इग्लड के प्रधानमन्त्री बने, मुक्त प्रात के गवनर लाड मेस्टन, (जो उस समय सर जेम्स मस्टन थे), श्री पियसन, जो बिजनौर के कलेक्टर थे दीनवधु सी० एफ० एड्रूज, अमरिका के सुप्रसिद्ध पत्रकार फल्प्स, और भी न जाने कितने देशी-विदेशी सज्जन गुरुकुल की शिक्षा पद्धति के दिग्दशन करने अपने अपने घरा से आए।

सन् 1914 की गर्मिया म इग्लैंड की लेबर पार्टी के ससदीय नेता रैमजे मेक्डोनाल्ड भारत यात्रा पर आये हुए थे। वह उन दिनो ही गुरुकुल कागडी भी आए। जहा की प्राकृतिक छटा, धार्मिक और सात्विक वातावरण उन्हे इतना भाया कि इग्लैंड पहुचकर उन्होने वहा के सुप्रसिद्ध दनिक 'डेली मिरर' मे अपने सस्मरण लिखे।

सर रमजे डोनाल्ड ने लिखा—"ईसाई धम के प्रवतक जीसस क्राइस्ट के मुख पर जो निमल मुस्कान दिखलाई पडती हे, ठीक वसी ही मुस्कराहट महात्मा मुशीराम के मुखमण्डल पर विराजमान है।'

जिस दौरान मेकडोनाल्ड गरुकुल मे आये थे, उस समय महात्मा मुशीराम के साथ उनके अनेक फोटो खीचे गये थे जो आज भी गुरुकुल म सुरक्षित हैं। इस फोटो मे महात्मा मुशीराम की देदीप्यमान देह है जिसे ब्रह्मचारी गण घेरे हुए है। उस समय महात्मा जी के मन म लहर उठ रही थी कि भारत पुन विश्व का सावभौम गुरु बन जाए। उसी लक्ष्य को क्रिया रूप म लाने के लिए, शिक्षा का स्वरूप प्राचीन सस्कृति के आधार पर देने के लिए जगह-जगह गुरुकुलो की स्थापना कर दी

जाए। उसी गुरुकुल के बारे मे रमजे मेकडोनाल्ड आगे लिखते है ' रात रेल मे कटी और प्रभात वेला म हरिद्वार पहुचा, जहा गगा नदी पवतो की गोद छोडकर न चे मदानो की ओर उतरती है। रेलवे स्टेशन तीथ यात्रियो से भरा पडा था। स्पष्ट लग रहा था, इनम से बहुत स लोग दूर दूर स्थानो से आए हुए हैं।

वक्षो से ढकी हुई ये पवत श्रृ खलाए शीश उठाए खडी हुई थी। पवन इग्लैंड के शिशिर काल के झोको के समान वह रही थी। हमने गुरुकुल तक की यात्रा पदल ही करने का निश्चय किया।

नदी तट पर पहुचते ही एक से एक सु दर प्राकृतिक दृश्य सामने आते गए। समीप की पहाडिया महान हिमालय के हिम मडित चोटियो को जस प्रणाम कर रही थी। गगा नदी की एक एक तरग और हिमालय पवत का एक एक हिस्सा सूय की किरणो स सोन की तरह चमक रहा था।

गगा नदी मे पीपो का पुल था। जहा से हम गगा के पार पहुचे। सुदूर उन्नत वास के एक सिरे पर ध्वज लहरा रहा था। जो गुरुकुल का प्रवेश द्वार था।

गुरुकुल, गुलाब और चमली के फूलो से सुगन्धित मार्गों से भरा हुआ था, एक ओर भोजनशाला थी व दूसरी ओर गुरुकुल की मुख्य इमारत। चारो ओर क्रीडा क्षेत्र है। मध्य म वर्गाकार छात्रावास है। सिंह द्वार यानि प्रवेश द्वार पर ही वेदो के सनातन मूल पवित्र 'ओउम की ध्वजा लहराती है।

उस समय वहा 300 के लगभग बालक शिक्षा प्राप्त कर रहे थे। प्रवेश के समय अनिवायत आयु छह से दस वप के अन्दर रहना चाहिए था। ये बालक 25 वप की आयु तक शिक्षा प्राप्त करते ह।

उन्हें महात्मा मुन्शीराम के सरक्षण म यहा छोडा गया है। वहा इन समय उनके पिता ह। प्रात चार बजे वे बालक अपनी कठोर चीड की बनी शय्याओ से उठते। उठकर शौचादि स मुक्ति पाकर व्यायाम करते, इसके बाद गगा के शीतल जल म स्नान करते हैं।

इसके बाद प्रारम्भिक सध्या (प्राथना) होती। उष्ण ऋतु म यह

बच्चे नगे पर ही चलते। उन्हे कठोर जीवन व्यतीत करना पड़, इसी बात को ध्यान म रखकर प्रारम्भ से ही ऐसा अभ्यास कराया जाता था।

सभी बच्चे पीताम्बर पहनकर शिक्षा ग्रहण करते। यही गुरुकुल का गणवेश है। यहा रहते हुए बच्चे अपने माता पिता के दशन वार्षिक मले म ही कर पाते। सहस्रा तीर्थयात्री यहा आते। विशेष रूप से चापडिया बनाई जाती। पुरान अग्रेजो के मेलो के समान भीड इकट्ठी होती। दीर्घावकाश मे बालको को उनके अध्यापक भारत के प्रसिद्ध व एतिहासिक स्थानो मे ले जाते। इन यात्राओ मे बच्चे काश्मीर से कन्याकुमारी तक स्थाना की यात्राए कर चुके थे।

शासक वग के मानस और दृष्टि के लिए यह सब एक अशाति-जनक समस्या थी। क्योकि अध्यापको मे न कोई अग्रेज था और न ही अग्रेजी भाषा की पढाई वहा होती थी। पढ़ाई का माध्यम हिन्दी भाषा थी। इसके अलावा पजाब विश्वविद्यालय द्वारा भारतीया की उच्च शिक्षा क मूल स्तम्भ अग्रेजी साहित्य की पुस्तकें वहा प्रयोग नही की जाती थी। विद्यार्थी सरकारी विश्वविद्यालय की परीक्षा म नही भेजे जाते थे। महाविद्यालय अपनी ही डिग्रिया देता था। सच बात तो यह थी कि यहा कानून भग हो रहा था। आश्चय से स्तब्ध अधिकारियो का इसे एक ही सास मे राजद्रोह कहा जा सकता था पर तु यह नियम गुरुकुल पर लागू हो सकते थे, यह नही कहा जा सकता था।

भारत मे अग्रजी शिक्षा के जनक लाड मकाले ने सन् 1835 म सरकारी पत्र मे अपने जो विचार प्रस्तुत किये थे, उनको देखत हुए गुरुकुल की स्थापना एक महत्त्वपूण कदम थी। गुरुकुल को छाडकर अन्य किसी शिक्षा सस्था ने इन नियमो का विरोध नही किया था। महात्मा मुशीराम ने इन नियमो के विपरीत चलकर गुरुकुल की स्थापना की थी।

सन् 1901 मे मुशीराम ने जालधर मे इस शिक्षा प्रणाली का स्पष्ट विरोध किया था। उन्होन इस विषय म एक परचा भी प्रकाशित किया था, जिसमे अग्रेजी भाषा प्रणाली व अग्रेजी शिक्षा प्रणाली को दूषित ठहराया गया था।

अंग्रेज सरकार मुंशीराम के इस प्रकार के विचारों से सख्त नाराज थी। गुरुकुल की तलाशी लेकर गुरुकुल को बन्द कराने की तैयारी चल रही थी। पर महात्मा मुंशीराम कलेक्टर मिस्टर फोर्ड से मिल आए, जिससे कलेक्टर फोर्ड उनसे बहुत ज्यादा प्रभावित हुए।

बहुत से सरकारी अफसर गुरुकुल आए और महात्मा मुंशीराम की विद्वत्ता और गुरुकुल के शुद्ध वातावरण से बहुत प्रभावित हुए। उनका गुरुकुल के विषय में फैलाई जाती रही सारी अफवाहें झूठी साबित हुई।

नतीजा यह हुआ कि अंग्रेज सरकारी अधिकारी महात्मा मुंशीराम को हर तरह का सहयोग देने को तैयार हो गए। कुछ दिन बाद ही अंग्रेज सरकार ने गुरुकुल विश्वविद्यालय को 'चार्टर प्राप्त यूनिवर्सिटी' मानने को तैयार हो गई। इस सम्बन्ध में काफी स्पष्ट रूप से एक बहुत ऊंचे अधिकारी ने महात्मा मुंशीराम को हर प्रकार का सहयोग देने को कहा।

लार्ड चेम्स फोर्ड की गुरुकुल यात्रा के बाद सरकारी अधिकारियों का तांता धीरे धीरे समाप्त हो गया।

पर गुरुकुल की छवि अब धीरे धीरे विवादास्पद हो गई। पहले सरकार द्रोही संस्था कही जाती थी। अब धीरे धीरे इसे सरकार समर्थित सरकारी आश्रम कहा जाने लगा। इस कार्य में गुरुकुल के एक दो असन्तुष्ट अध्यापक और मुंशीराम के कट्टर विरोधी भी शामिल थे।

19 गुरुकुल के साये मे

जगल के बीचोबीच वृक्षो की सघन छाया म गुरुकुल के आचाय मुशीराम बठे हुए थे। उनके साथ उनके शिष्य भी मौजूद थे। धार्मिक चर्चाए हो रही थी। स्नेह, सौहार्द, त्याग और लगन क प्रतीक आचाय मुशीराम अपन शिष्या का भविष्य सुधारन के लिए व उन्हे भावी राष्ट्र के सच्चे सपूत बनान म दत्तचित्त थ तभी समीप के जगल म एक शेर के दहाडन की आवाज आई और वह शेर गुरु और शिष्यो की ओर लपका। शिष्य शेर को देखकर घबरा गए, भय से चीखने लगे। परन्तु कुलपिता मुशीराम तनिक भी नही घबराए। उनके चेहरे पर वही निश्चिन्तता और निर्भीकता थी। अपन प्राणो की जरा भी परवाह किय बिना उन्होने अपन क्तव्य पालन मे जरा भी देर नही की। अपने सिर की पगडी खोलकर उसम एक पत्थर बाधा और उसे घुमाते हुए शेर के पास जा पहुचे। शेर न एक दृष्टि से ऐसे वीर और साहसी व्यक्ति को देखा और पलटकर वापिस जगल म चला गया।

जिन दिनो महात्मा मुशीराम गुरुकुल की स्थापना कागडी शहर मे कर चुके थे, उन्ही दिना बिजनौर कनखल सहारनपुर कागडी आदि म सुल्ताना डाकू का बहुत आतक था। एक बार इस इलाके म सुल्ताना डाकू न गुरुकुल को लूटने की सूचना दी। महात्मा मुशीराम सुल्ताना डाकू के आन की सूचना से बिलकुल नही डरे। उन्होन सुल्ताना डाकू को गुरुकुल पर डाका डालन की खुली चुनौती देने की सूचना द दी।

कुलपति महात्मा मुशीराम अपन प द्रह बीस स्नातको के साथ उसी तिथि से गुरुकुल म पहरा दन लगे। बीच बीच म आध्यात्मिक चर्चाए चलती थी। तभी बहुत से घुडसवार अपन अपने हथियारो से लस वहा

आकर रुके डाकुओं के नायक ने आगे बढ़कर स्वामी जी से पूछा, "तुम कौन हो ?

महात्मा मुंशीराम ने कहा, "आज हम सुल्ताना डाकू लूटने आ रहा है। इसलिए हम लोग उसका इंतजार कर रहे हैं। हम लोग अपने जीवन के अंतिम क्षण तक अपने इस गुरुकुल की रक्षा करेंगे।"

उत्तर सुनकर वह व्यक्ति घोड़े से उतरा और महात्मा मुंशीराम के चरणों में झुककर प्रणाम किया। वही सुल्ताना डाकू था। महात्मा मुंशीराम के निर्भय तेज और त्याग को देखकर उस पर इतना गहरा प्रभाव पड़ा कि वह आजीवन महात्मा मुंशीराम का भक्त बन गया। आज भी कांगड़ी गांव के लोग इस घटना को भूले नहीं हैं।

आर्य समाज के प्रबल प्रचारक और वीर शिरोमणि स्व० पं० लेखराम को जब एक विधर्मी ने धोखे से उनके पेट में छुरा भोंक दिया, मुंशीराम के मुख से अनायास ये शब्द निकले थे— लेखराम तू तो धन्य है ! जो तुझे ऐसी मौत मिली। काश, मुझे भी ऐसी मौत मिले। उस समय यह कौन जानता था। सचमुच ईश्वर ने महात्मा मुंशीराम के लिए उनकी इच्छानुसार ऐसी मौत निश्चित की थी।

लार्ड कर्जन भारत के वायसराय थे। सन् 1905 ई० में बंगाल को दो भागों में विभक्त किया था। अंग्रेजों की इस नीति से सारे भारत में तहलका मच गया। सारे देश में अंग्रेज सरकार के खिलाफ आन्दोलन फैल गया। पंजाब में लाला लाजपत राय और आर्य समाज के नेताओं ने इस आंदोलन में सक्रिय रूप से भाग लिया। जिससे सरकार की नजर आर्य समाज के ऊपर पड़ने लगी। गुरुकुल कांगड़ी भी आर्य समाज से सम्बद्ध एक संस्था थी। इस कारण गुरुकुल पर भी अंग्रेज सरकार की कोप दृष्टि पड़ने लगी। गुरुकुल की आर्थिक सहायता बन्द हो गई। सरकार की कोप दृष्टि के डर से गुरुकुल को आर्थिक सहायता पहुंचाने वाले सज्जनों ने भी आर्थिक सहायता बन्द कर दी।

तब गुरुकुल को जिन्दा रखने के लिए महात्मा मुंशीराम ने अपना सर्वस्व गुरुकुल को दान में दे दिया। जालंधर में स्थित अपनी समस्त अचल सम्पत्ति को बेचकर उन्होंने गुरुकुल को सारी धनराशि अर्पण कर

दी। इस तरह महात्मा मुशीराम न अपने त्याग और लगन से गुरुकुल को जीवित बनाए रखा।

सन 1916 ई० की बात है। रात के करीब साढे बारह बजे थे। कुलपिता महात्मा मुशीराम एक रोगी ब्रह्मचारी के पास खड हुए थ। ब्रह्मचारी कै कर रहा था और मुशीराम उसका सिर सहला रह थ। रोगी बालक के क करने के बाद महात्मा न उसे कुल्ला कराया और स्वय उस स्थान की सफाई की। फिर उस बालक का सिर सहलाने लगे।

जब वह बालक के पास गय थे तब वह अकेला बीमारी स तडप रहा था। उसके साथ का बालक उसकी बीमारी दखकर किसी को बुलाने गया था। पर महात्मा मुशीराम तो बिना बुलाए ही दुखियो क पास पहुच जाते थे।

सन् 1915 16 की एक घटना है—एक ब्रह्मचारी की जाघ पर एक गिल्टी निकली। दद असह्य हो रहा था, मुशीराम न हरिद्वार स सरकारी डॉक्टर को बुलाया। उसन आते ही गिल्टी की परीक्षा की और आपरेशन की तयारी करन लगा, जिससे ब्रह्मचारी घबरा गया।

मुशीराम न उसके सिर पर हाथ रखकर कहा 'पुत्र घबराओ नही, डरो नही तुम इस गुरुकुल के छात्र हो। अभी शीघ्र ही ठीक हो जाओगे।'

ब्रह्मचारी की घबराहट वही थम गई। उसने बिना बेहोश हुए, बड ही साहस स अपना पूरा आपरेशन कराया। ऐसे थे महात्मा मुशीराम जिनके स्पश से घबराया हुआ इन्सान भी साहस की प्रतिमूर्ति बन जाता था।

महात्मा मुशीराम हमेशा कहत थे, राम को राजा उनके गुरु वसिष्ठ ने बनाया। कृष्ण को उनके गुरु अगरिस ने, अजुन को आचाय द्रोणाचाय न और ऋषि दयानन्द को उनके गुरु विरजानन्द न। इसीलिए इस देश म गुरुकुलो की आवश्यकता है ताकि यहा वशिष्ठ व द्रोण समान गुरु हो व भारतवासी राम, कृष्ण और अजुन की भाति साहसी हो।

गुरुकुल के छात्रो को घुडसवारी, धनुर्विद्या, व्यायाम, आसन व

शारीरिक अभ्यास कराये जाते थे। साथ ही बौद्धिक स्तर पर इन छात्रो को देश प्रम स्वतन्त्रता और आय सस्कृति के सम्ब ध मे बतलाया जाता था। इन कार्यो को देखकर अग्रज सरकार गुरुकुल को बागियो का अडडा समझने लगी। इस तरह अंग्रेज सरकार ने गुरुकुल की निगरानी प्रारम्भ कर दी।

सन 1905 के बग भग के आ दोलन के बाद आय समाज सहित सारे देश मे अग्रजी शासन के विरुद्ध विद्रोह का आग फल रही थी। गुरुकुल भी इससे अछूता नही था। सन 1906 और 1907 मे सरकार न आय समाज पर कडो दष्टि रखी। लाला लाजपत राय, बाल गगाधर तिलक व विपिन चन्द्रपाल ने सारे देश म ओजस्वी भाषण दकर जनता को एक होकर अग्रेजो के विरुद्ध ललकारा। अग्रजो न लाला लाजपत राय को निष्कासित कर दिया।

बहुत स आय समाजी अग्रजो से डरकर यह कहन लग कि आय समाज का देश की राजनीति से कोई सम्ब ध नही है। परतु मुशाराम इतन कायर नही थे। उन्हान आर्य समाज के वार्षिक उत्सव मे लाला लाजपत राय की नीतियो पर अपना विश्वास प्रकट किया और अग्रजो को धमकियो से जरा भी नही डरे।

महात्मा मुशीराम दश म आर्य सस्कृति की पुनर्स्थापना के साथ देश का स्वतन्त्र देखना चाहते थे।

20 आर्यसमाज के लिए आदोलन

सन् 1900 ई० से 1912 ई० तक का समय आय समाज के लिए कठिन परीक्षा का समय था। आय समाज पर अग्रेजा की कडी दृष्टि थी। अग्रेज सरकार, आय समाज को एक सरकार विरोधी सस्था समझती थी। इस आय समाज का दमन होन लगा। देशी रियासतें भी अग्रेजो की शह पाकर आय समाज के पीछे लग गयी।

सन 1909 म पटियाला रियासत, जो अग्रेज सरकार समर्थित रियासत थी, मे एक साथ एक सौ चौरासी आय समाज कायकर्ताओ को गिरफ्तार कर लिया गया। उन पर राजद्रोह का मुकदमा चलाया गया। उनको बदी बनाकर उन पर तरह-तरह के अत्याचार हुए, मुशी-राम को इस समाचार से बहुत दुख हुआ और क्रोध भी आया।

परतु उन्होने इस स्थिति मे न तो अपना साहस छोडा और न धर्य ही छोडा। पहले तो उन्होने इस विषय मे अखबारा म लेख लिखे, सरकार को पत्र लिखे। परन्तु जब सरकार व रियासत नही मानी तो वह पटियाला जाकर उन गिरफ्तार आय समाज के कायकर्ताओ के लिए मुकदमा लडने को तयार हो गय।

यो तो महात्मा मुशीराम आचार्य और कुलपति के रूप मे गुरु कुल का काम सम्हाले थे। पर उन्हाने पीडित आय समाजियो के लिए पुन वकालत की आज्ञा ले रखी थी। इसी आज्ञा के कारण वह पटियाला वकालत करने जा पहुचे।

सरकार का अग्रज वकील ग्रे था और आय समाजियो के वकील महात्मा मुशीराम। परवी करते हुए मुशीराम ने सरकारी वकील की धज्जिया उडा दी। अग्रेज वकील के छक्के छूट गये।

सरकारी अभियोग के सारे आरोप झूठे साबित हो गये जिस कारण अदालत ने सभी विद्रोहियो को रिहा कर दिया। पर उसके साथ ही

पटियाला रियासत न राजद्रोहियो को पटियाला रियासत से बाहर कर दिया। जिस कारण सभी व्यक्तियो को पटियाला शहर छोडना पडा। मुन्शीराम न इन सभी व्यक्तियो को गुरुकुल मे स्थान दे दिया। जिससे रियासत का आय समाजियो को कष्ट पहुचाने का इरादा पूरा न हो सका। हारकर उन्होन अपना यह आदेश वापिस ले लिया।

उस समय अग्रज सरकार के विरुद्ध आर्य समाज की वकालत करना आसान नही था। मुशीराम का यह मुकदमा चिर स्मरणीय माना जाता है।

पटियाला की देखा देखी धौलपुर रियासत म आय समाज पर अत्याचार प्रारम्भ हो गये। वहा की पुलिस न आयसमाज मदिर पर से 'ओ३म का झडा उतार लिया।

इस पर मुन्शीराम न झडा फिर अपन स्थान पर लगा दिया। इससे क्रुद्ध हाकर मदिर का वह हिस्सा तोड कर गिरा दिया गया। उस स्थान पर राज्य की ओर स शौचालय बनान की तयारी होने लगी। जिसका सारे रियासत के आयसमाज ने विरोध किया। किंतु रियासत पर कुछ असर नही पडा। यहां तक कि सारे भारत म इस बात पर विरोध होन लगा पर सब बेकार हो गया।

अत म महात्मा मुशीराम इस मोर्चे पर भी सामन आय। उन्होने इस आदेश के खिलाफ रियासत क अदर सत्याग्रह की घोषणा कर दी। सारे देश से आयसमाज के कायकर्ता जब धौलपुर पहुच गय तब रियासत के राजा घबरा गये। उसे हार मानकर मुशीराम क सामन झुकना पडा। उसन आदेश वापिस ले लिया।

सम्पूण भारत की आयसमाज की केन्द्रीय सभा, जो सार्वदेशिक आय प्रतिनिधि सभा कहलाती है, न सन् 1909 ई० म महात्मा मुन्शीराम को सभा का प्रधान चुना। इस तरह महात्मा जी का काय क्षत्र अब सम्पूण भारत बन गया।

सन् 1909 म ही भागलपुर म हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष महात्मा मुन्शीराम हुए। इस तरह मुन्शाराम का बहुमुखी प्रतिभा क दशन हर काय क्षेत्र म हो रहे थे।

21 सन्यास और स्वामी श्रद्धानन्द के रूप मे

मुशीराम स्वामी दयानन्द की आश्रम व्यवस्था के कट्टर समथक थे। उन्होने 1902 म गुरुकुल की स्थापना की और लगातार पन्द्रह सालो तक गुरुकुल कागडी के आचाय, कुलपति या कुलपिता रहे।

सन 1917 ई० की 12 अप्रल को उन्होने सन्यास लेकर अव सन्यास आश्रम म जान का निश्चय कर लिया।

अपनी सारी सम्पत्ति, जो कुछ उन्होने जालधर म अर्जित की थी, वह और अपनी कोठी आय प्रतिनिधि सभा को दान दे दी। सन्यास आश्रम अनुसार इर्ष्याओ से मुक्त होकर अपना सारा देश ही अपना काय क्षेत्र बनाया। तब से जीवन की अतिम सास तक सारे देश, समज और धर्म की सेवा मे रत रहे। जिस गुरुकुल मे उन्होन अपना तन, मन और ध्यान लगाया था वह भी उन्होने त्याग दिया। सच्चे स्वामी की तरह वीतरागी बनकर अपनी इच्छाओ पर नियत्रण कर वह स्वामी श्रद्धानन्द बनकर स्वामी दयानन्द सरस्वती की राह मे चल पडे।

जिस समय महात्मा गाधी दक्षिण अफ्रीका मे गोरी सरकार के खिलाफ आन्दोलन कर रहे थे। उस समय स्वामी श्रद्धानन्द न उनका समथन किया और उन्हे आर्थिक सहायता भेजी। भारत आने पर स्वामी श्रद्धानन्द व महात्मा गाधी मे अटूट मत्री हुई जो मृत्यु पर्यन्त बनी रही। महात्मा गाधी की ही आज्ञा पर वह काग्रेस म शामिल हो गये।

सन् 1918 मे गढवाल म अकाल पडा। जिसके लिए स्वामी श्रद्धानन्द न जनता के दुख दद को दूर करन के लिए सारे देश स अनाज, कपडा, आर्थिक सहायता ली और गढवाल चले गये। जहा

उसे घूम घूम कर बाटा ।

वद्धावस्था होन के बावजूद वे एक एक दिन म अठारह बीस मील पैदल चलते । पीडित जनता की सेवा करते । उ्होने इस काय म अपने ब्रह्मचारियो को भी लगा दिया। इस तरह उ्होने अपने अतुलनीय प्रयास से, परिश्रम से व सेवा से गढवाल की पीडित जनता की सेवा की । आय समाज मे युवा हि्दू वग को सुगठित और शिक्षित करन के लिए आय कुमार सभा का विधिवत गठन स्वामी श्रद्धानन्द के महायोगदान के कारण ही सभव हुआ। उनका यह विश्वास था कि आय समाज के कार्यो को आगे बढान के लिए नौजवानो की वडी भारी सख्या मे आवश्यकता है। उनका यह भी उद्देश्य था कि य युवक व युवतिया सगठित होकर देश व राष्ट्र की सेवा कर ।

सन् 1919 मे मरठ म आयकुमार सभा क वार्षिक सम्मलन म स्वामी श्रद्धान्द न देश और समाज की सेवा का अमर सदेश दिया।

स्वामी श्रद्धान्द खिलाफत न आदोलन मे मुसलमानों का पूरा साथ दिया व उनके आन्दोलन म अग्रेजो के खिलाफ पूरी तरह भाग लिया । स्वामी जी न इस आदोलन मे मुसलमाना की वडी सवा की ।

पहले महायुद्ध के समय अग्रजा न तुर्की के वादशाह, जिस मुस्लिम खलीफा या धम गुरु मानते, को उसकी गद्दी स उतार दिया और तुर्की क वादशाह की बादशाहत हमेशा के लिए समाप्त कर दी। बाद म तुर्की के सावजनिक नेता मुस्तफा कमाल पाशा न टर्की के खलीफा का पद हमशा के लिए समाप्त किया था ।

परन्तु भारत के मुसलमानो न उस समय टर्की क बादशाह क खिलाफ खलीफा को पुन गद्दी पर बिठलान क लिए आदोलन छड डाला । जिस खिलाफत आदालन नाम दिया गया। गाधीजी और काग्रेस न इस आन्दोलन म मुसलमाना का पूरा साथ दिया। गाधीजी और काग्रेस के इस आन्दोलन म काग्रेस क आह्वान पर श्रद्धानन्द भी खिलाफत आन्दोलन म पूरी तरह कूद पड ।

दिल्ली की जामा मस्जिद स स्वामी श्रद्धानन्द न मुसलमाना को सम्बोधित किया। खिलाफत आदोलन क कार्यकर्ता स्वामी श्रद्धान्द

की सवारी उस दरवाजे से ले गये, जहा से कभी शहशाह आलमगीर नमाज पढन को प्रवेश करते थे।

जिस मच से तब तक कोई मुसलमान धार्मिक नेता भी भापण नही दे पाया था। उस मच से 4 अप्रल 1919 को स्वामी श्रद्धानन्द ने 'ओ३म त्व हि न पिता वसो, त्व माता शतक्रतो वभूविथ अथाते सुम्नमी महे' इस वेद मत्र द्वारा हिन्दू मुसलमानो का एक सूत्र मे वाध लिया। उन्होने अपन ओजस्वी भापण के जरिए हिन्दू मुस्लिम एकता पर जोर दिया ओ३म शान्ति, शान्ति शान्ति के साथ उनका भापण समाप्त हुआ। स्वामी श्रद्धानन्द दोनो ही सप्रदायो से एकता चाहते थे। वाद म टर्की म जब स्वय मुस्तफा कमाल पाशा ने खिलाफत को समाप्त कर दिया तो खिलाफत आदोलन स्वत ही समाप्त हो गया। पर हिन्दू मुसलमानो म एकता की एक डोर वन गयी।

प्रथम विश्वयुद्ध की समाप्ति पर सारे देश मे एक वार फिर स्वतत्रता की माग जोर पकडन लगी। धीरे धीरे सारे देश मे आदोलन और सत्याग्रह होने लगे। इस पर जनता की भावनाओ का दमन करन के लिए अग्रेज सरकार के रोलर एक्ट द्वारा सत्याग्रहो व आन्दोलनो पर दमन की शुरुआत हो गयी। सन् 1919 ई० में महात्मा गाधी के नेतृत्व मे पूरे देश म इस रोलर एक्ट के विरुद्ध आन्दोलन छिड गया।

मार्च 1919 ई० मे दिल्ली के चादनी चौक म एक विशाल जुलूस निकल रहा था जिसका नेतृत्व स्वामी श्रद्धानन्द कर रहे थे। जुलूस के आगे आगे भगवे कपडो मे स्वामी श्रद्धानन्द चल रहे थे। जव यह जुलूस घटाघर के पास पहुचा तो पुलिस ने जुलूस को रोकना चाहा तो स्वामी श्रद्धानन्द ने ललकारा—'यह जलूस नही रुकेगा।' तब अग्रेज अधिकारियो ने चेतावनी दी यदि यह जुलूस नही रुका तो उस पर गोली चलाई जायेगी। जुलूस आगे वढा तो सिपाहियो ने सगीनें तान ली।

उस समय स्वामी श्रद्धानन्द ने अनुपम साहस धैर्य और कर्तव्य-परायणता का परिचय देते हुए, अपनी छाती खोलकर सामने कर दी व सिंहो की भाति गरजते हुए बोले 'पहले मेरे सीने म गोली दागो, जुलूस नही रुकेगा। स्वामी श्रद्धानन्द की निर्भीकता, देखकर अग्रेज सिपाहियो

की सगीनें शम से नीचे झुक गयी। सिपाही एक ओर हट गय और जुलूस धडधडाता हुआ आग बढ गया। यह स्वामी श्रद्धानन्द के नेतत्व की विजय थी।

इस अदभुत घटना को हमेशा याद दिलान के लिए इस स्थान पर आय सावदशिक प्रतिनिधि सभा ने स्वामी श्रद्धानन्द की मूर्ति स्थापित की। जिस स्थान पर दिल्ली नगर निगम ने स्मारक बनवा दिया है।

अमृतसर मे जालियावाग मे 6 अप्रल सन् 1919 ई० को अग्रेज सनिक अधिकारी जनरल डायर ने पजाब के तत्कालीन गवनर सर ओडायर का आना स एक शातिपूवक चल रही सभा पर गोलियाँ बरसा कर सैंकडो लोगो को मौत के घाट उतार दिया।

इस तरह की अमानुषिक घटना आज तक नही हुइ है। जिस कारण अमनसर, पजाब और सारे पश्चिमी प्रातो म अग्रज सरकार का आतक फल गया।

महात्मा गाधीजी व अ य काग्रेसी नेताओ ने अमृतसर के लोगो के मन से भय निकालने के लिए अमतसर मे ही काग्रस का अधिवेशन करन का फसला किया। पर तु उस समय मात्र पजाब म ही नही अपितु सारे देश म ही आतक का वातावरण था। कोई भी आदमी काग्रेस के अधिवेशन म भाग लेने तक को तयार नही था। न ही कोई प्रबध सचालन करने को तयार था। काग्रेस के सामने यह बडी समस्या थी। एक आर उ ह जनता के मनोबल को बढाना था व इसक साथ साथ सरकार का विरोध भी करना था। पजाब के बड बड नेता इस समय नेतृत्व करने से डरकर घर बठे हुए थे। ऐसे कठिन समय मे एकबार स्वामी श्रद्धानन्द सामने आये व उन्होने काग्रेस अधिवेशन का भार, देश और स्वतन्त्रता के नाम पर अपने कधो पर ले लिया।

स्वामी श्रद्धानन्द अमतसर काग्रस अधिवेशन की स्वागत समिति क अध्यक्ष थ। उन्हान बडी ही निर्भीकता से इस अधिवेशन का प्रबन्ध अपने हाथ म ल लिया। उसी दिलरी स व कुशलता स उन्हाने काग्रेस अधिवशन का प्रब ध भी किया। पजाब की जेलो मे उस समय हजारो की सख्या मे काग्रेस सत्याग्रही कायकर्ता बदी थे। अग्रेजो की दमनकारी

आतक से जनता इतनी भयभीत व आतंकित थी कि लोग तब तक काग्रस का नाम लेने से भी घबराते थे। किंतु स्वामी श्रद्धान द न बडी ही वहादुरी से काग्रेस अधिवेशन का आयोजन किया।

स्वामी श्रद्धान द ने स्वागताध्यक्ष के रूप म कांग्रेस के इतिहास मे पहली वार वेद मत्रो से अधिवेशन का आरम्भ किया। आयसमाजी हिंदी मे अपना स्वागत भाषण पढा। स्वामीजी काग्रेस को विशुद्ध भारतीय रूप देने मे सक्षम सिद्ध हुए। काग्रस इतिहास म यह अधिवेशन इसलिए भी मह वपूण है कि ने पूरे अधिवेशन का नतत्व एक स यासी ने सफलतापूवक किया था।

सन 1921 ई० में काग्रेस का अधिवेशन अहमदावाद में हुआ था। अहमदाबाद में तिलकनगर में अधिवेशन हुआ। स्वामी श्रद्धानन्द भी इस अधिवेशन में भाग लेने गये हुए थे। उस समय काग्रेस अधिवेशन के दौरान महात्मागाधी को स्वामी श्रद्धान द ने यह आश्वासन दिया कि वह देश की स्वतत्रता तक काग्रेस के हमेशा साथ रहेंगे। इस अधिवेशन में स्वामी श्रद्धानन्द ने भारत की पूण आजादी के सपने देखे थे। सन् 1921-22 में स्वामीजी ने काग्रेस के लिए सक्रिय रूप से काय किया।

बारदोली अधिवेशन के दौरान जब सत्याग्रह आरम्भ हुआ तो सार देश के साथ स्वामी श्रद्धानन्द भी इस अधिवेशन में शामिल हुए थे। किंतु वीच में ही कुछ हिंसात्मक घटनाओ के कारण जब महात्मागाधी ने बारदोली का सत्याग्रह स्थगित किया था तब स्वामी श्रद्धान द न उनसे इस विषय में अपनी असहमति जतलाई। स्वामी श्रद्धान द जी का कहना था कि यदि सावदेशिक अहिंसा सत्याग्रह में रखी जायेगी तो सत्याग्रह हो ही नही सकता। सावदेशिक अहिंसा सारे देश के सत्याग्रहियों के लिए असम्भव है और राजनीतिक सिद्धान्तो के अनुकूल भी नही है। किंतु महात्मा गाधी अपनी बातो पर अडिग रहे और यही से स्वामीजी व महात्मागाधी में मतभेद होने लगे। बाद मे अछूतोद्धार के प्रश्न पर स्वामी श्रद्धान द काग्रेस से असतुष्ट हो गये और सक्रिय राजनीति स हटकर सामाजिक कार्यों की ओर मुड गये।

11 फरवरी सन् 1920 स सन 1922 तक पूरे दो वष पुन स्वामी श्रद्धान द को न गुरुकुल के काय भार सम्भाल लिया। पूण रूप से व्यवस्थित कर गुरुकुल को वह आधुनिक रूप दिया, जिसक कारण आज गुरुकुल कागडी हरिद्वार विश्व म प्रसिद्ध है सन् 1920 में स्वामी श्रद्धान द न 'श्रद्धा पत्र का प्रकाशन भी आरम्भ किया जिसक द्वारा उन्होन अपने राजनतिक सामाजिक एव धार्मिक विचारो को जनता तक पहुचाया।

सन् 1922 ई० मे पजाब म सिखो न अपनी धार्मिक व अय मार्गे लेकर आदोलन शुरू किया, सिखो न सारे पजाब म सत्याग्रह करना आरम्भ कर दिया। अमतसर मे गुरु का बाग नाम का धार्मिक स्थान था, जहा पर सिखो न सम्मिलित होकर एक सभा आयोजित की। सभी सिख सत्याग्रही निहत्थे थे। अग्रेज सरकार उनके इस आदोलन के खिलाफ थी। अग्रेज सिपाहियो न सभी आ दोलनकारी सिक्खो क ऊपर लाठियो से हमला किया व सत्याग्रहियो पर अनक अत्याचार किए। सिक्ख फिर भी अपने निश्चय पर अडिग थ। स्वामी श्रद्धानद जो उस समय दिल्ली म मौजूद थे। उन्ह जब सिक्ख सत्याग्रहियो की कठिनाइया का पता चला तो वह तुर त उनका साथ दन क लिए अमतसर जा पहुचे। अमतसर पहुचकर स्वामी श्रद्धान द न अमतसर के स्वणमन्दिर मे अकालतख्त के पास खड होकर सारी सिख जाति को ओजस्वी भाषण दिया। उन्होने उनको यह भी आश्वासन दिया कि उनकी धार्मिक मागो के साथ भारत के सभी हिन्दू उनके साथ हैं।

अग्रेज सरकार भला यह बात कसे सहन कर सकती थी वह तो 'फूट डालो और राज्य करो' की राजनीति मे विश्वास करत थ। उन्होने तुरन्त हिन्दू सिख एकता म दरार डालने के लिए 10 सितम्बर 1922 ई० को स्वामी श्रद्धानन्द को गिरफ्तार कर लिया। मुकदम का स्वाग रच डाला और उन्हें जेल भेज दिया गया। इस मुकदम म स्वामीजी को सत्रह महीन की सजा सुना दी गयी।

स्वामी के जेल जाते से सारे देश म तहलका मच गया। सारा आयसमाज सत्याग्रह करने पर उतारू हो गया। अग्रजो न भी

अकालियो के साथ नरमी बरतने का आश्वासन दिया व इस डर से कि कही स्थिति और खराब न हो जाये, अंग्रेज सरकार ने स्वामी श्रद्धान द को 26 दिसम्बर 1922 को रिहा कर दिया।

सन 1921 म देश भर मे जब साम्प्रदायिक दगे हुए थे, तब महात्मा गाधी न उन्हे शात करने के लिए दिल्ली मे 21 दिन का उपासव रखा था।

देश के सामाजिक व साम्प्रदायिक एकता बनाये रखने के लिए स्वामी श्रद्धान द न हकीम अजमल खा, और मौलाना मुहम्म' अली ने दिल्ली मे एकता सम्मेलन बुलाया था। एकता सम्मेलन की अध्यक्षता पडित मोतीलाल नेहरू ने की थी जो स्वामी श्रद्धानन्द के बचपन के मित्र और क्लासफैलो थे।

यह अधिवेशन तीन दिन तक चला। स्वामी श्रद्धान्न ने अधिवेशन को सफल बनान का पूरा प्रब'ध किया। इस तरह स्वामी श्रद्धानन्द ने हि'दू मुस्लिम, सिक्ख सभी सम्प्रदाय के लोगो को मिला के रखने का प्रय'न किया।

22 स्वामी श्रद्धानन्द के अन्य सामाजिक कार्य

अग्रेजो की हमेशा से यह रणनीति थी कि 'फूट डालो और राज्य करो।' स्वामी श्रद्धान द अग्रेजो की इस कूटनीति को बहुत अच्छी तरह समझते थे।

हि दू जाति के ही निम्न वग यानि चमारो, मेहतरों को अछूत कह कर उनसे भेदभाव करने की नीति को स्वामी श्रद्धान द धम विरोधी मानते थे। मानवता की दृष्टि से भी यह अच्छी बात नहीं थी। स्वामी श्रद्धान द ने दिल्ली म अछूतोद्धार का काय करना शुरू कर दिया।

इससे पहले भी स्वामी श्रद्धान द ने कांग्रेस के अमतसर अधिवेशन म अपने स्वागत अध्यक्षीय भाषण मे दलितो के उद्धार के महत्त्व पर बहुत जोर दिया। स्वामी श्रद्धान द काग्रेस के कलकत्ता, नागपुर और बारदोली के अधिवेशनो मे भी गये व वहा भी दलित वग के उद्धार के लिए काग्रेस मे कई प्रस्ताव भी रखे व उन्हे पारित भी कराया।

श्रद्धान द जी न काग्रेस के मत्री श्री विटठल भाई पटेल और श्री मोतीलाल नेहरू से भी यह आग्रह किया कि काग्रेस दलित वग क लिए कोई ठोस सक्रिय कायक्रम बनाय। पर काग्रेस ता एक विशुद्ध राजनीतिक सस्था थी। इस कारण काग्रेस मे अछूतोद्धार का काय उतना ज्यादा न हो सका जितना स्वामी जी चाहत थे। स्वामी जी ने इस बात से खफा होकर काग्रस द्वारा बनी दलितोद्धार समिति स त्यागपत्र दे दिया। दिल्ली म 13 फरवरी 1923 को अखिल भारतीय दलितोद्धार समिति बना ली गई। इस प्रकार स्वामी जी काग्रस स अलग हो गय।

23 जुलाई सन् 1923 को तत्कालीन काग्रस महामन्त्री श्री मोती

नाल नेहरू को स्वामी श्रद्धानन्द ने अपने पत्र मे लिखा कि, "मैं ऋषि दयानन्द के बताये हुए वदिक धम के माग ही का अवलम्बन कर अपना काम करूगा। अब मैं ब्रह्मचय पद्धति की पुरातन शिक्षा प्रणाली का पुनरुद्धार करूगा, ज मगत जात पात को मिटाते हुए अछूत कही जाने वाली जाति मे सम्मिश्रण करके हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने का यत्न करत हुए अहिसा का क्रियात्मक प्रचार करूगा।"

तत्पश्चात स्वामी श्रद्धानन्द ने अपनी सम्पूण शक्ति हरिजना को आय जाति का सम्मिलित अग बनाने म लगा दी। अछूतो के सारे भेदभावो को उन्होने उठा लिया। आय समाज क सभी वार्षिक सम्मेलनो मे हरिजना के साथ सवर्णों के प्रीतिभोज आयोजित किए जाने लगे। स्वामी जी न हरिजनो के बच्चो को गुरुकुल मे निशुल्क शिक्षा प्रदान की। उन्हे वेदो और सस्कृति की शिक्षा दी। उन्हे आय समाज के मदिरो के पुरोहित पडितो के रूप मे विराजमान किया। इसके अलावा ऐसे प्रीतिभोज आयोजित किए जाते, जिनमे खाना बनाने वाले और परोसने वाले हरिजन होते थे।

स्वामी जी *'कृण्वन्तो विश्वमायम'* को वदिक धम का लक्ष्य मानते हुए ससार भर को आय बनाना वदिक धम का अनिवाय अग समझते थे। इस प्रकार स्वामी जी का धम विश्वव्यापी धम था।

गुरुकुल प्रणाली और हरिजनोद्धार द्वारा स्वामी जी चाहते थे कि भारत के युवक तेजस्वी वीर और विद्वान बनें। इसके द्वारा आत्म नियोजन परिवार नियोजन, समृद्धिशाली राष्ट्र निर्माण के लिए एक राष्ट्र होना उसके नागरिको को एक सूत्र मे बधा होना यह स्वामी जी का स्वप्न था। महात्मा गाधी ने भी बाद मे अछूतोद्धार की आवश्यकता को अच्छी तरह समझा। पर इसकी पूव भूमिका स्वामी श्रद्धानन्द द्वारा तय की गई थी।

अखिल भारतीय दलितोद्धार सभा के द्वारा स्वामी जी ने हरिजनो की ओर समाज की बहुमूल्य सेवा की। उन्होने अन्य धार्मिक सगठनो द्वारा हरिजनो को धर्म परिवतन करने की योजना से रोका और हिन्दू जाति के सगठन का बीडा उठाया। उन्होने सामाजिक छुआछूत को

हटाया सामाजिक असमानता को दूर किया। सबको धर्म और सामाजिक मान्यता में समान अधिकार दिए और पुनः प्राचीन आर्य व वैदिक समाज की रचना की ओर कदम बढ़ाया।

आगरा के आस पास रहने वाले मलकाना राजपूत जो कभी विधर्मी बन गए थे पुनः हिन्दू धर्म को अपनाना चाहते थे। उनकी आबादी पांच लाख थी। भरतपुर, मथुरा व आगरा जिलों में ये लोग बसे हुए थे। आगरा के आर्य समाज द्वारा इस विषय में विचार विमर्श चल रहा था।

स्वामी श्रद्धानन्द की अध्यक्षता में एक सम्मेलन आयोजित हुआ। जिसमें स्वामी जी ने उन सब मलकाना राजपूतों से विचार विमर्श किया जिससे उन्हें यह विश्वास हो गया कि यह लोग सच्चे मन से हिन्दू धर्म ग्रहण करना चाहते हैं। तब स्वामी जी ने उनके लिए शुद्धि का आयोजन किया।

गांव के गांव स्वामी श्रद्धानन्द की विशाल हृदयता से प्रभावित होकर पुनः हिन्दू धर्म ग्रहण करने लगे, जिसका अन्य राजपूत भाइयों ने दिल खोलकर स्वागत किया। अपने बिछड़े हुए हिन्दू भाइयों को गले लगाकर उनका स्वागत किया।

इस घटना से प्रभावित होकर सारे हिन्दू समाज में अद्भुत चेतना जाग गई। केवल गंगाजल की बूंद से ही शुद्धि होने लगी।

आर्य समाज ने सबको अपने धर्म में शामिल करने के लिए अपने द्वार खोल लिये। शुद्धि के द्वार हर व्यक्ति के लिए खुल गए। जिस कारण स्वामी श्रद्धानन्द ने अखिल भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा की स्थापना की।

स्वामी श्रद्धानन्द अपने राजनीतिक जीवन में यह महसूस कर लिया था कि हिन्दू जाति वर्षों की राजनीतिक गुलामी के कारण शिक्षित सम्पन्न व बहुसंख्या में होने के कारण ही बिखरी हुई थी। धार्मिक और जातीय रूप से असंगठित है। अंग्रेज सरकार भी इसी कारण हिन्दुओं को ही हमेशा दबाती थी। इसी कारण स्वामी श्रद्धानन्द ने बिखरी सुसंगठित हिन्दू जाति को संगठित कर एक सूत्र में बांध लिया।

उन्हीं दिनों मालाबार मे हिन्दुओं पर अत्याचार हो रहे थे। हिन्दुओं पर जबरदस्ती धर्म परिवर्तन करने के लिए दबाव डाला जा रहा था। वहां हिन्दू अल्पसंख्यक थे इस कारण उन्हें अपनी सम्पत्ति और जान माल का भय बना हुआ था।

स्वामी जी को यह बात पता लगी तो उन्हें बहुत ही दुःख पहुंचा। उन्हें यह विश्वास हो गया कि अब आत्मरक्षा के लिए हिन्दुओं को संगठित करना बहुत आवश्यक है। उन्होंने स्थान स्थान पर महावीर दल की स्थापना की।

जिससे भयभीत हिन्दू मानस मे आत्मविश्वास और आत्मचेतना की भावनाएं भरी। स्वामी जी के इस महान कार्य में महामना मालवीयजी व लाला लाजपत राय का अमूल्य सहयोग था। इस प्रकार सन 1923-24 ई० तक स्वामी जी ने अपना हिन्दू संगठन और अस्पृश्यता निवारण आंदोलन चलाया था। सन् 1924 में गुरुकुल कन्या पाठशाला की स्थापना देहरादून में की जो स्त्री शिक्षा की दशा में एक अपूर्व कदम था।

आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द की जन्म शताब्दी मार्च, 1925 ई० में मथुरा में महर्षि दयानन्द शताब्दी महोत्सव के रूप में मनाई गई। भारत के प्रत्येक हिस्से से लाखों की संख्या में आर्य समाज के सदस्य इस सम्मेलन में भाग लेने आए। इस अवसर पर ऋषि दयानन्द के कार्यों व साहित्य पर एक विशाल प्रदर्शनी का भी आयोजन किया गया।

स्वामी श्रद्धानन्द एक विशेष रेलगाडी से मथुरा पधारे। स्टेशन से लेकर अधिवेशन स्थल तक स्वामी जी की विशेष सवारी बडी शान और श्रद्धा से निकली। इस सम्मेलन के अध्यक्ष स्वामी श्रद्धानन्द थे और कार्यकारी अध्यक्ष स्वामी नारायण, इसके अलावा महात्मा हंसराज, श्री अयोध्या प्रसाद, स्वामी सच्चिदानन्द, स्वामी वेदानन्द आदि नेता उपस्थित थे।

यह सम्मेलन एक द्वितीय उत्सव कहा जाएगा। यहां जगह जगह से आए सैकडों प्रतिनिधि इकट्ठे हुए थे। हर डेरे और सम्म

पर 'ओउम स्वय ब्रह्म' का पाठ होता रहता। यह समारोह इतन व्यापक रूप मे हुआ कि इस समारोह न सारे राजनीतिक और धार्मिक सम्मलनो की छवि को फीका कर दिया।

सन 1926 ई० को असगरी बेगम नाम की एक महिला अपन दो लडके व एक भतीजे के साथ दिल्ली रेलवे स्टेशन पर उतरी। वह स्वय स्टेशन से उतरकर आय समाज गयी व वहा उसन अपना नाम शाति देवी रख लिया। साथ ही उसन अपन बड पुत्र का नाम धमराज रख लिया जिसकी आयु चार साल थी। गोद के एक पुत्र का नाम अजुन रखा तथा अपन भतीजे का नाम अमरसिह रखा। तत्पश्चात शाति देवी, वहा स वनिता विश्राम आश्रम चली गई।

तीन महीन पश्चात् जून के अन्त तक असगरी बेगम के पिता एक नवयुवक के साथ दिल्ली आए। कुछ दिन बाद उसका पूव पति अब्दुल हलीम भी दिल्ली पहुच गया।

उस समय शाति देवी वनिता आश्रम म थी। जिसके मत्री सुखदेव थे। डा सुखदव स्वामी श्रद्धानन्द के दामाद थे। स्वामी श्रद्धानन्द न अपनी पुत्री अमत कला का विवाह डा० सुखदेव से किया था।

असगरी बेगम क पूव पति उसके मौलवी व पिता स्वामी श्रद्धानन्द और सुखदव स मिले जिन्होन उन्हें शाति देवी से मिलन की पूरी छूट दी। तीनो न शाति देवी को बहुत समझाया, डराया धमकाया, परन्तु हर प्रकार के प्रयास के बाद भी वह वापिस लौटने के लिए नही माना। अन्त मे उन लोगो न स्वामी श्रद्धानन्द के ऊपर मुकद्दमा कायम कर दिया। न्यायालय न सभी पक्षो को सुना व गवाहो से जिरह की शाति देवी का बयान लिया, जिसके आधार पर न्यायालय को स्वामी श्रद्धानन्द और सारा आय समाज निर्दोष लगा। यह फसला अग्रज न्यायाधीश का था। जिसन अपने फसले म कहा, स्वामी श्रद्धानन्द न कभी किसी के धार्मिक क्षेत्र म कोई हस्तक्षप नही किया है। वह बलात धम का काय नही करत बल्कि स्वामी श्रद्धानन्द तो अखिल हिन्दू जाति को एक सूत्र म बाधना चाहते थे।

स्वामी जी न 'तज' और 'अजुन', नामक दो समाचार पत्र निकाले।

जो हिन्दी और उर्दू भाषा मे थे। अप्रैल सन 1926 म स्वामी जी न 'लिवेटर' नामक अग्रेजी समाचार पत्र का प्रकाशन भी किया। इन समाचार पत्रो के माध्यम से स्वामी जी निर्भीकता पूवक अपन विचार व्यक्त करते थे। सन 1924 ई० मे दिल्ली म अखिल भारतीय हि दी साहित्य सम्मलन का आयोजन हुआ। जिसमे स्वामी श्रद्धान द को उनका अब तक की हि दी सेवाओ के कारण अधिवेशन की स्वागत कारिणी सभा का अध्यक्ष बनाया गया।

स्वामी श्रद्धानन्द हि दी साहित्य सम्मलन भागलपुर अधिवशन के इसस पहले भी सभापति चुने गए थे। स्वामी जी ने ही इसस पूव अपने प्रारम्भिक भाषण मे हि दी का राष्ट्रभाषा कहकर सम्बोधित किया था। हि दी को राष्ट्र भाषा का सम्बोधन दने वाले और राष्ट्र भाषा के रूप म हि दी के लिए प्रयत्न करन वालो म सबस पहले स्वामी श्रद्धानन्द का ही नाम लिया जाएगा।

23 मृत्यु

दिसम्बर सन् 1926 ई० के आरम्भ की बात थी, बनारस के दौरे से स्वामी श्रद्धानन्द वापिस दिल्ली लौटे। सर्दी का मौसम था, वृद्ध शरीर और फिर सफर की लौट धूप से थकान बढ़ गई। इससे स्वामी जी के गले और फेफड़ों पर सर्दी का असर हो गया और उन्हें खांसी और जुकाम ने भी बुरी तरह जकड़ लिया।

छह दिसम्बर को स्वामी श्रद्धानन्द को उसी हालत में मोटर से गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ, के लिए वहां के मुख्याधिष्ठाता के साथ रवाना हुए। 12 मील के मोटर सफर से स्वामीजी की हालत और ज्यादा ही खराब हो गई जिसके कारण वह उसी शाम को वापिस दिल्ली लौट आए।

दिल्ली पहुंचते ही स्वामी श्रद्धानन्द को डाक्टर सुखदेव ने आकर देखा। उन्होंने मित्र डाक्टर अंसारी को भी बुला भेजा। डाक्टर अंसारी ने स्वामी श्रद्धानन्द की परीक्षा कर उन्हें दवाइयां दीं। स्वामी जी का डाक्टर अंसारी पर अगाध विश्वास था। तीन दिन तक इलाज कराने के बाद डाक्टर अंसारी रामपुर चले गए। उन तीन चार दिनों के अन्दर ही स्वामी जी की तबियत दिन प्रतिदिन बिगड़ती ही गई।

पुन डाक्टर अंसारी के आने पर इलाज चला। स्वामी जी के प्रधान व विश्वसनीय चिकित्सक डाक्टर अंसारी के अलावा डा० सुखदेव, स्नातक धर्मपाल और स्नातक धर्मसिंह ने उनकी बहुत सेवा की।

रोगमुक्त होने पर स्वामी जी की मानसिक विचारधारा में अद्भुत परिवर्तन दिखाई देने लगा। जब तक रोगी थे तब तो वह स्वस्थ होना चाहते थे। रोगमुक्त हुए तो दिल की अवस्था दूसरी हो गई थी। अब उनको यह महसूस हो रहा था कि उनका अंतिम समय नजदीक आ गया है। जिस दिन पहले पहल प्रातःकाल उनका बुखार उतरा, स्वामी जी ने अपने सचिव धर्मपाल को भेजकर, पंडित इन्द्र जी, लाला देशबंधु

गुप्त स्वामी रामानन्द और सुखदेव को बुलाया व इन सबके सामने अपनी वसीयत लिखने की घोषणा की। 22 दिसम्बर के प्रात काल का यह दिन था। सभी लोगो ने स्वामी जी को समझाया कि वह अब चिंता न करे वह पूरी तरह स्वस्थ हो गए हैं।

पर स्वामी श्रद्धानन्द का जवाब था कि औषधि के बल पर सास तो चलाई जा सकती है। पर अन्दर से यह आवाज उठती है इसलिए मैं अब उठकर खडा न हो सकूगा। वसीयत लिख दी जाए, यही अच्छा है।

दिन के समय जब उनके पुत्र इद्र जी पिता से मिलने गये, तब भी उन्होने इद्र को पास बिठला कर कहा, "इस शरीर का अब कुछ ठिकाना नही है। मैं शायद ही उठू। तुम एक काम जरूर करना। मेरे कमरे मे आर्य समाज के इतिहास की सामग्री पडी है। उसे सम्भाल लेना और समय निकालकर इतिहास जरूर लिख लेना। एक बात और कहना चाहता हू, इतिहास के लिखते समय मुझे माफ मत कर देना, मैंने बहुत बडी बडी भूलें की हैं। तुम्हे तो मालूम है मैं क्या करना चाहता था और किधर पड गया। तेज और अर्जुन पत्र मेरी भावना के अनुसार चलते रहे। गुरुकुल की सदा रक्षा की जाय।"

डा० सुखदेव ने हसकर कहा, "स्वामी जी आपकी तबीयत अच्छी हो रही है। थोडे ही दिनो मे आपको भोजन मिलने लगेगा, आप उठने बठने लगेगे।

स्वामी जी ने उत्तर दिया, 'डाक्टर साहब आप लोग तो ऐसा ही कहते है परन्तु मेरा शरीर तो अब सेवा के योग्य नही रहा। इस रोगी शरीर से देश का कोई कल्याण नही हो सकेगा। अब तो हृदय मे एक ही इच्छा है कि दूसरा जन्म लेकर नये शरीर से इस जीवन के कार्य को पूरा करूगा।"

21 दिसम्बर की बात है, स्वामी जी से व्याख्यान वाचस्पति पडित दीनदयाल शर्मा कुशलता पूछने आए। उस समय स्वामी जी के लिए उठना मुश्किल था। बातचीत के लिए स्वामी को सहारा देकर बिठला दिया गया। शर्मा जी ने स्वामी जी से कहा, 'मालवीय जी मुझसे एक साल बड़े हैं। उनसे आप एक वर्ष बड़े हैं। अभी हम लोगो का बहुत सा

करना है। आप इतनी जल्दी मोक्ष की तयारी क्यो कर रहे हैं ?'

स्वामी का उत्तर था—' पंडित जी, इस युग म मोक्ष कहा ! मैं तो केवल चोला बदलकर दूसरा शरीर धारण करना चाहता हू। अब इस शरीर से सवा सम्भव नही है। इच्छा है कि फिर इसी देश मे उत्प न होने का सौभाग्य प्राप्त हो।

22 दिसम्बर को लाला देशब धु गुप्त आये। उनसे भी कुशल क्षम के बाद स्वामी श्रद्धान द न यही कहा, "डाक्टर लोग कुछ भी कह पर मुझे आत्मा का यही शब्द सुनाई देता है कि अब यह शरीर किसी काम का नही है। मैं इस समय जान के लिए बिलकुल तयार हू।"

स्वामी जी को लग रहा था कि उनका अन्त स निकट है।

23 दिसम्बर सन 1926 को एक दुष्ट व्यक्ति न जब वह बिस्तर पर लेटे थे उन्ह गालिया दागकर मौत के घाट उतार दिया।

डा० असारा, आदि न तत्काल स्वामी श्रद्धानद की परीक्षा की पर अब तो सिवाय शरीर क कुछ शेष नही था।

स्वामी जी का सवक धर्मसिंह भी जाघ म गोली लगने से घायल हो गया। परन्तु स्वामी जी के निजी चिकित्सक आ गए पर अब कुछ शेष नही था। हत्यारे को स्वामी जी के निजी सचिव धमपाल न पकड भी लिया था। पुलिस न उसे हिरासत म ले लिया। जो होना था वह तो हो गया। स्वामी जी की मृत्यु हो गई, यह जानकर बुरी तरह भीड टूट पडी।

दूसरे दिन स्वामी श्रद्धानन्द का शव लाखो श्रद्धालुओं के साथ निगम बोध घाट पर पहुचा। जहा स्वामी जी का उनके पुत्र इ द्र न वदिक रीति स अ तिम सस्कार किया।

इस प्रकार स्वामी श्रद्धानन्द की जीवन-लीला सम प्त हो गइ। पर उनके काय आज भी जीवित हैं।

OOO